



दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी
“वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट”
11-12 जून, 2025

स्मारिका



प्रायोजक :

O.N.G.C. New Delhi & GBP-NIHE

आयोजक :

IQAC एवं भूगोल विभाग, राठ महाविद्यालय पैठाणी
(राठ शिक्षा विकास समिति)





दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी “वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट”

11-12 जून, 2025

स्मारिका

मुख्य सम्पादक

डॉ० जितेन्द्र कुमार नेगी

सह सम्पादक

डॉ० राजीव दूबे

सह सम्पादक

डॉ० प्रवेश कुमार मिश्र

सह सम्पादक

डॉ० देवकृष्ण

प्रायोजक :

O.N.G.C. New Delhi & GBP-NIHE

आयोजक :

IQAC एवं भूगोल विभाग, राठ महाविद्यालय पैठाणी
(राठ शिक्षा विकास समिति)

मुख्य संरक्षक

श्री गणेश गोदियाल (संस्थापक राठ महाविद्यालय पैठाणी)

संरक्षक

श्री मंगल सिंह

(प्रबन्धक राठ महाविद्यालय पैठाणी)

संगोष्ठी संयोजक/सचिव

डॉ० जितेन्द्र कुमार नेगी

प्राचार्य, राठ महाविद्यालय पैठाणी

सम्पादकीय



राठ महाविद्यालय पैठाणी में 11 एवं 12 जून 2025 को आयोजित होने जा रही राष्ट्रीय संगोष्ठी वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट विषय पर स्मारिका प्रकाशन के अवसर पर आप सभी विद्वतजनों, शोधार्थियों एवं ग्रामीण जनों को हृदय के अन्तःकरण से हार्दिक शुभकामनाएँ।

यह हमारे महाविद्यालय के लिये परम गर्व का विषय है कि हम एक ऐसे अत्यन्त समसामयिक ज्वलन्त एवं वैश्विक महत्व के विषय पर संगोष्ठी का आयोजन कर रहे हैं, जो न केवल पर्यावरणीय संतुलन अपितु मानव एवं जीव जन्तुओं के अस्तित्व से जुड़ा है। वनाग्नि अर्थात् वनों में लगने वाली आग मात्र एक प्राकृतिक आपदा नहीं अपितु यह एक बहुआयामी पर्यावरणीय संकट है, जो कार्बन उत्सर्जन, जैव विविधता के संहार तथा जलवायु असंतुलन का मूल कारण बन रही है।

विगत वर्षों में आस्ट्रेलिया, अमेरिका, ब्राजील, यूरोप, अफ्रिका तथा भारत के भी उत्तराखण्ड सहित विभिन्न अरण्य क्षेत्रों में हुई प्रचण्ड वनाग्नियाँ इस बात कि जीवंत गवाही देती हैं। वैश्विक तापमान में निरन्तर हो रही वृद्धि, वर्षा चक्र की अनियमितता एवं विकास के नाम पर मानवीय गतिविधियों की असीमितता किस प्रकार इस संकट को और अधिक तीव्र बना रही है।

वन प्राचीन काल से ही हमारे जीवन के अविच्छन्न अंग रहे हैं। वे केवल प्रकृति की शोभा ही नहीं अपितु पृथ्वी के कार्बन सिंक के रूप में कार्य कर समस्त जैव जगत के लिये संतुलन का कार्य करते हैं। किन्तु जब यही वन धधकते हैं, तब वे स्वयं कार्बन-डाई-ऑक्साइड का महास्रोत बन जाते हैं, जिससे वैश्विक ताप वृद्धि की गति और तीव्र हो जाती है। यह परिघटना जलवायु परिवर्तन के इस दुष्चक्र को जन्म देती हैं, जिससे समुद्री सतह में बढ़ोत्तरी, हिमनदों का विगलन, अनियमित मौसमी घटनाएँ तथा कृषि क्षेत्र में अस्थिरता जैसे संकट उत्पन्न होते हैं।

आज यह पर्यावरणीय आपदा का रूप ले चुकी है। आज इस विषय पर गम्भीर चिन्तन, मनन आवश्यक है। इस संगोष्ठी में वैज्ञानिकों, पर्यावरणविदों, शिक्षाविदों तथा शोधार्थियों की ही सहभागिता नहीं है, वरन सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्रीय ग्रामीणजनों की सहभागिता है। इस संगोष्ठी में विषय विशेषज्ञों, शिक्षाविदों, पर्यावरणविदों एवं शोधार्थियों द्वारा प्रस्तुत शोधपत्र के सारांश स्मारिका के माध्यम से आप सभी के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास महाविद्यालय परिवार द्वारा संयुक्त रूप से किया जा रहा है। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस राष्ट्रीय संगोष्ठी के माध्यम से हम इस पर्यावरणीय आपदा को समझने और उसका सार्थक विकल्प प्राप्त करने का सफल प्रयास करेंगे। अंत में मैं महाविद्यालय के संस्थापक श्री गणेश गोदियाल जी, राठ शिक्षा विकास समिति के प्रबंधक एवं समस्त सदस्यगणों का पूर्ण सहयोग प्रदान करने के लिये आभार व्यक्त करता हूँ।

समस्त विद्वतजनों प्रतिभागियों एवं महाविद्यालय परिवार के समस्त सदस्यगणों को स्नेह, आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन की अपेक्षा के साथ सभी को अनन्त शुभकामनाएँ।


डॉ० जितेन्द्र कुमार नेगी
आयोजन सचिव

HEMVATI NANDAN BAHUGUNA GARHWAL UNIVERSITY, SRINAGAR (GARHWAL)-246174 UTTARAKHAND, INDIA
(A Central University)

हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल)–246174, उत्तराखण्ड, भारत
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

Prof. M.M.S Rauthan
Vice-Chancellor
कुलपति



Ph. No. : 01346-250260
Fax No. : 01346-252174
Ref. No. : VC/HNBGU/459
Dated : 22/05/2025

संदेश

मुझे यह जानकारी प्रसन्नता हो रही है कि राठ महाविद्यालय पैठाणी के आई.क्यू.ए.सी. एवं भूगोल विभाग द्वारा “वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट” विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। संगोष्ठी का शीर्षक बहुत ही ज्वलंत एवं समसामयिक है। इस अवसर को यादगार बनाने के लिए एक स्मारिका का भी प्रकाशन किया जा रहा है।

मुझे विश्वास है कि यह संगोष्ठी वनाग्नि जैसी गम्भीर समस्या पर आमजन को सकारात्मक सन्देश प्रदान करेगी। संगोष्ठी पूरे भारतवर्ष के प्रतिष्ठित प्रतिभागियों, प्रतिनिधियों, शिक्षाविदों को आकर्षित करेगी तथा वास्तविक चर्चा/विचार-विमर्श और विचारों को साझा करेंगे। इससे विद्यार्थी, शिक्षक, वैज्ञानिक वर्ग व आम जनमानस भी लाभान्वित होगा। इस अवसर पर प्रकाशित स्मारिका सभी के लिए उपयोगी और जानकारीपूर्ण होगी।

इस सराहनीय प्रयास के लिए मैं प्राचार्य/संगोष्ठी संयोजक डॉ० जीतेन्द्र कुमार नेगी एवं सम्पूर्ण आयोजन समिति को बधाई देता हूँ तथा साथ ही संगोष्ठी की सफलता के लिए हार्दिक शुभकामनाएं ज्ञापित करता हूँ।

(एम.एम.एस. रौथाण)

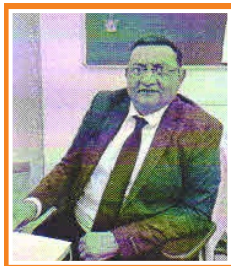
प्राचार्य,
राठ महाविद्यालय, पैठाणी
पोस्ट – पैठाणी, पट्टी – कण्डारस्यूं
पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड।



हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय
Hemvati Nandan Bahuguna Garhwal University
श्रीनगर गढ़वाल (उत्तराखण्ड)–246174
Srinagar Garhwal (Uttarakhand)-246174
केन्द्रीय विश्वविद्यालय
(A Central University)

Ref. No.: HNBGU/ RD /2025/152

Date: 04/06/2023



संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि राठ महाविद्यालय पैठाणी द्वारा “वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक संकट” जैसे अत्यंत महत्वपूर्ण एवं समसामयिक विषय पर एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। यह विषय वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में अत्यधिक प्रासंगिक है, विशेष रूप से हिमालय क्षेत्र की संवेदनशील परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए।

हिमालय न केवल भारत की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक धरोहर का प्रतीक है, बल्कि यह क्षेत्र जैव विविधता, जल स्रोतों और जलवायु परिवर्तन का भी प्रमुख आधार है। किंतु विगत कुछ दशकों में जिस तीव्र गति से जलवायु परिवर्तन और मानवीय हस्तक्षेप ने हिमालय की परिस्थिति संरचना को प्रभावित किया है, वह गंभीर चिंता का विषय है। ऐसे में इस प्रकार की संगोष्ठियाँ न केवल शोध एवं अकादमिक जगत के लिए आवश्यक हैं, अपितु समाज को जागरूक करने का भी सशक्त माध्यम हैं।

यह अत्यंत सराहनीय है कि राठ महाविद्यालय पैठाणी तथा भूगोल विभाग मिलकर इस ज्वलंत विषय पर गंभीर विचार विमर्श हेतु एक मंच प्रदान कर रहे हैं। इस आयोजन से शोधार्थियों, अध्यापकों, और विद्यार्थियों को विचारों के आदान-प्रदान तथा नवीन शोध की दिशा में प्रेरणा प्राप्त होगी।

मैं इस संगोष्ठी के आयोजकों, समन्वयक डॉ० जितेन्द्र कुमार नेगी तथा महाविद्यालय परिसर को इस उत्कृष्ट प्रयास के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ एवं आशा करता हूँ कि भविष्य में भी महाविद्यालय इस प्रकार के शैक्षणिक एवं शोधपरक आयोजनों की श्रृंखला को निरंतर जारी रखेगा, जिससे अकादमिक जगत को नवीन सोच और दिशा मिलती रहे।

प्राचार्य,
राठ महाविद्यालय, पैठाणी
पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

(प्रो० राकेश कुमार ढोड़ी)

कुलसचिव

कुलसचिव

हैं० न० ब० गढ़वाल विश्वविद्यालय

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

श्रीनगर (गढ़वाल)

संदेश



मुझे यह जानकर असीम हर्ष हो रहा है कि राठ महाविद्यालय पैठाणी द्वारा “वनाग्नि और जलवायु परिवर्तन : एक वैश्विक संकट” विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन दिनांक 11 एवं 12 जून 2025 को किया जा रहा है। वस्तुतः राष्ट्रीय संगोष्ठी के लिये चयनित यह विषय न केवल भारत बल्कि सम्पूर्ण विश्व के लिये ज्वलंत और विचारणीय विषय है।

दृष्टव्य है कि वनों में लगने वाली आग से उत्पन्न होने वाली विषम परिस्थितियां पर्यावरण को व्यापक रूप से क्षति पहुँचा रही हैं और यह सम्पूर्ण विश्व और मानवता के लिए कठिन चुनौती बन चुकी है। ऐसी परिस्थिति में ऐसे गंभीर विषय पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में संभावित विमर्श, शोध और समाधान की दिशा में कतिपय नवीन मानदण्डों की स्थापना होगी, ऐसा मेरा मानना है।

मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि उत्तराखण्ड के दुर्गम क्षेत्र में स्थापित हमारे महाविद्यालय में आयोजित होने वाली यह राष्ट्रीय संगोष्ठी प्रतिभागियों में वनाग्नि और तत्जनित पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति गहरी समझ प्रदान करेगा और साथ ही साथ इसके समाधान के प्रति नवीन दृष्टि विकसित करेगा।

मैं इस अवसर पर संगोष्ठी के आयोजन मण्डल, प्रबुद्ध वक्ताओं, सचेत प्रतिभागियों और सम्पूर्ण महाविद्यालय परिवार को हार्दिक शुभकामनाएँ इस आशा और विश्वास के साथ प्रेषित कर रहा हूँ कि आप सबका यह नूतन प्रयास सम्पूर्ण समाज और नवागत पीढ़ियों को सकारात्मक दृष्टिकोण एवं सही दिशा प्रदान करने में सफल रहेगा।

असीम शुभकामनाओं के साथ

श्री गणेश गोदियाल

संस्थापक

राठ महाविद्यालय पैठाणी
पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

संदेश



हमारे लिये यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि राठ महाविद्यालय पैठाणी के IQAC एवं भूगोल विभाग के संयुक्त तत्वाधान में राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन 11 एवं 12 जून 2025 को होने जा रहा है। इसी के तहत स्मारिका भी प्रकाशित होने जा रही है।

“वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन : एक वैश्विक संकट” विषय आज के समय का पूरे भूमण्डल में एक ज्वलन्त एवं गम्भीर पर्यावरणीय मुद्दा है। इसने सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित किया हुआ है। इस संगोष्ठी में ग्रामीण जनों की भी सहभागिता हो रही है, यह इसे विशेष बनाता है।

संगोष्ठी के माध्यम से विशेषज्ञों, प्राध्यापकों एवं शोधार्थियों तथा ग्रामीण जनों के विचार जानने का अवसर मिलेगा, जिससे सभी लाभान्वित होंगे।

हमें आशा है, हम अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल होंगे। मैं प्रबंधन, आयोजन सचिव एवं आयोजक मण्डल सहित सम्पूर्ण महाविद्यालय की टीम को स्मारिका प्रकाशन और संगोष्ठी के सफल आयोजन के लिये हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

प्राचार्य

राठ महाविद्यालय पैठाणी, पौड़ी गढ़वाल
उत्तराखण्ड

संदेश



मेरे लिए यह अत्यन्त हर्ष एवं सौभाग्य का विषय है कि राठ महाविद्यालय, पैठाणी द्वारा दिनांक 11-12 जून 2025 को “वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट” विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन किया जा रहा है। मेरा यह मानना है कि राष्ट्रीय सेमिनार के लिए निर्धारित यह विषय वर्तमान समय में न केवल भारत अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण और विचारणीय है। एक ऐसे समय में जब वन की आग और इससे उत्पन्न होने वाली पर्यावरणीय समस्याएँ सम्पूर्ण विश्व के लिए सोचनीय विषय बन चुकी हैं, उत्तराखण्ड के दुर्गम क्षेत्र में विद्यमान राठ महाविद्यालय द्वारा आयोजित होने वाला यह राष्ट्रीय सेमिनार निःसन्देह प्रशंसनीय है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस सेमिनार में होने वाली चर्चा-परिचर्चा से प्राप्त होने वाला परिणाम न केवल शिक्षकों एवं छात्रों को नई दिशा प्रदान करेगा अपितु सम्पूर्ण समाज के लिए अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होगा।

मेरी शुभकामना है कि यह राष्ट्रीय सेमिनार अपने उद्देश्यों को पूर्णतः प्राप्त करने में सफल हो।

प्रबन्धक

श्री मंगल सिंह

राठ महाविद्यालय पैठाणी

पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

“वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट”

11 जून, 2025

प्रमुख वक्ता (प्रथम सत्र)

पद्मश्री श्री कल्याण सिंह रावत
संयोजक: मैती आन्दोलन।

प्रो० डी०सी० गोस्वामी
डीन आर्ट्स, श्री देव सुमन विश्वविद्यालय।

प्रमुख वक्ता (द्वितीय सत्र)

प्रो० के०सी० पुरोहित
पूर्व निदेशक, हे०न०ब०ग० केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
पौड़ी परिसर।

प्रो० जी०के० ढिंगरा
डीन साइंस, श्री देव सुमन विश्वविद्यालय।

श्री पवन नेगी
प्रभागीय वनाधिकारी, सिविल सोयम, पौड़ी गढ़वाल।

सांस्कृतिक कार्यक्रम सत्र

डॉ० राकेश भट्ट,
निदेशक उत्सव ग्रुप

12 जून, 2025

प्रमुख वक्ता (प्रथम सत्र)

प्रो० सुरेश बंदूनी
शहीद भगत सिंह कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

श्री स्वप्निल अनिरुद्ध
प्रभागीय वनाधिकारी,
गढ़वाल वन प्रभाग (रिजर्व), पौड़ी गढ़वाल।

प्रमुख वक्ता (द्वितीय सत्र)

प्रो० बीरेन्द्र सिंह नेगी
शहीद भगत सिंह कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

श्री ओम प्रकाश भट्ट
मैनेजर ट्रस्टी
चन्डी प्रसाद भट्ट पर्यावरण एवं विकास केन्द्र, गोपेश्वर।

विषय

“वनाग्नि एवं जलवायु परिवर्तन: एक वैश्विक संकट”

उप-विषय :-

- | | |
|---|---|
| 1. वनाग्नि और जलवायु परिवर्तन का पारस्परिक सम्बन्ध। | 7. वनाग्नि और मानव स्वास्थ्य। |
| 2. वनाग्नि: कारण एवं प्रकार। | 8. भारत में वनाग्नि की स्थिति और चुनौतियाँ। |
| 3. मानव गतिविधियों द्वारा वनाग्नि में वृद्धि। | 9. सतत विकास और वन संरक्षण के लिये नीतियाँ। |
| 4. जलवायु परिवर्तन और उसका वैश्विक प्रभाव। | 10. स्थानीय समुदायों एवं सरकारों की भूमिका। |
| 5. जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर प्रभाव। | 11. उत्तराखण्ड में वनाग्नि एक पर्यावरणीय आपदा। |
| 6. वनाग्नि का जैव विविधता पर प्रभाव। | 12. वनाग्नि की रोकथाम में तकनीकी (ड्रोन, सैटेलाइट, जी0पी0एस0 आदि) उपायों की आवश्यकता। |
| | 13. वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी। |

संगोष्ठी के विषय में

वनाग्नियाँ एवं जलवायु परिवर्तन आज के युग की गम्भीर वैश्विक समस्याएँ हैं, जो परस्पर जुड़ी हुयी हैं और सम्पूर्ण जैव मण्डल को प्रभावित कर रही हैं। वनाग्नि चाहे वह प्राकृतिक कारणों से हो या मानवीय लापरवाही से, न केवल मूल्यवान वन सम्पदा को नष्ट करती है, बल्कि वायुमण्डल में विशाल मात्रा में कार्बन-डाई-ऑक्साइड भी छोड़ती है। यह गैस ग्रीन हाउस प्रभाव को बढ़ावा देती है, जिससे वैश्विक तापमान में वृद्धि होती है।

जलवायु परिवर्तन के कारण सूखा, अत्यधिक गर्मी और वर्षा की अनियमितता जैसे मौसम सम्बन्धी बदलाव होते हैं, जो वनाग्नियों की आवृत्ति एवं तीव्रता को और अधिक बढ़ा देते हैं। विशेष रूप से अमेजन, ऑस्ट्रेलिया, कैलिफोर्निया और साइबेरिया जैसे क्षेत्रों में भीषण वनाग्नियों के उदाहरण सामने आये हैं, जिसका प्रभाव न केवल स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र पर बल्कि वैश्विक पर्यावरण पर भी पड़ रहा है।

इन वनाग्नियों के कारण लाखों जीव जन्तुओं का जीवन समाप्त हो जाता है, वनों की जैव विविधता नष्ट हो जाती है और जन जीवन भी संकट में आ जाता है। इसके साथ ही प्रदूषण का स्तर बढ़ता है और मानव स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है। हमारे राज्य उत्तराखण्ड में भी वनाग्नि प्रतिवर्ष विकराल रूप में घटित हो रही है। यह अब पर्यावरणीय आपदा का रूप ले चुकी है।

इस वैश्विक संकट से निपटने के लिये हमें सतत वन प्रबंधन, जन जागरूकता, आधुनिक तकनीकों से निगरानी और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग जैसे उपाय अपनाने होंगे, साथ ही हमें जलवायु परिवर्तन के कारणों, जैसे अत्यधिक कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने की दिशा में भी ठोस कदम उठाने होंगे। वनों की रक्षा करना केवल पर्यावरण की नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानवता की रक्षा करने के समान है।

राठ महाविद्यालय : एक संक्षिप्त परिचय

उत्तराखण्ड राज्य के पौड़ी गढ़वाल जनपद में विकास खण्ड थलीसैण के पैठाणी कस्बे में जिला मुख्यालय से लगभग 48 किमी० दूर स्थित राठ महाविद्यालय पैठाणी की स्थापना वर्ष 2003 में की गयी थी। महाविद्यालय के बगल से ढाईजूली गाड प्रवाहित होती है, जो पश्चिमी नयार की सहायक नदी है। जनपद का यह क्षेत्र विकास से कोसों दूर अशिक्षा, पिछड़ेपन, कम उम्र में विवाह, पशुबलि प्रथा से वर्षों तक ग्रसित रहा। हालाँकि प्राथमिक एवं इण्टरमीडिएट स्तर तक यहाँ शिक्षण संस्थानों को स्थापना जरूर हुई, लेकिन उच्च शिक्षण संस्थान युवाओं के लिये दिवा-स्वप्न ही रहा। इस वेदना को समझते हुए ग्राम बहेड़ी के युवा श्री गणेश गोदियाल, जो कि मुम्बई में एक स्थापित उद्यमी थे, ने क्षेत्र के तमाम सम्भ्रान्तजन जागरूक नागरिकों व जन प्रतिनिधियों से सम्पर्क कर व सहयोग स्थापित कर ग्राम सभा पैठाणी द्वारा दान में दी गयीं भूमि पर एक उच्च शिक्षण संस्थान स्थापित किया और नाम रखा गया। राठ महाविद्यालय पैठाणी। 17 जुलाई 2003 में महज 30 छात्र छात्राओं, प्राचार्य, 07 शिक्षक गणों एवं कुछ शिक्षणेत्तर कर्मचारियों के साथ यह मिशन उच्च शिक्षा प्रारम्भ हुआ जो आगे चलकर नये-नये कीर्तिमान गढ़ता चला गया। यहाँ 2005 में बी०एड० एवं 2012 में बी०पी०एड० कोर्स प्रारम्भ हुआ। वर्तमान में महाविद्यालय नैक द्वारा प्रदान बी ग्रेड से आच्छादित है एवं निरन्तर विकास की और अग्रसर है। वर्तमान में महाविद्यालय में 750 छात्र/छात्राएँ अध्ययनरत हैं। 26 मार्च 2015 को तत्कालीन राज्य सरकार द्वारा महाविद्यालय को अनुदानित श्रेणी में सम्मिलित कर लिया गया है।



पैठाणी : एक परिचय

पौड़ी गढ़वाल जनपद के कोटद्वार (गढ़वाल) के प्रवेश द्वार से लगभग 130 किमी० दूर स्थित पैठाणी (थैलीसैण ब्लॉक) उत्तराखण्ड के मानचित्र में एक छोटे से गाँव के रूप में अंकित है। यह पैठाणी गाँव राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

उत्तराखण्ड में पर्यटन की दृष्टि से पैठाणी के महत्व को कमतर नहीं आँका जा सकता। यह एक पौराणिक गाँव है। इसका उल्लेख स्कन्दपुराण के केदारखण्ड में दर्ज है। केदारखण्ड के अनुसार, राष्ट्रकूट पर्वत पर भगवान शिव ने कठोर तप किया था। केदारखण्ड में कहा गया है, “**ऊँ: भूर्भव स्व: राठीनापुरोहव पैठीन सिग्रोत्र राठो इहागेच्छति**” अर्थात् राहु के गोत्र पैठीन के कारण इस जगह का नाम पैठाणी पड़ा। राहु के अद्भूत मन्दिर एवं राष्ट्रकूट पर्वत के कारण यह पूरा क्षेत्र राठ क्षेत्र कहलाता है। मान्याताओं के अनुसार पैठाणी स्थित प्रसिद्ध मन्दिर का निर्माण आठवीं शताब्दी ईसवी में आदि शंकराचार्य द्वारा करवाया गया।



सलाहकार समिति

1. पद्मश्री श्री कल्याण सिंह रावत, संयोजक - मैती आन्दोलन।
2. प्रो० एम०एस० पंवार, विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, हे० न० ब० ग० केन्द्रीय वि० वि० श्रीनगर गढ़वाल।
3. प्रो० के०सी० पुरोहित, पूर्व निदेशक, हे० न० ब० ग० केन्द्रीय विश्वविद्यालय, पौड़ी परिसर।
4. प्रो० अनीता रुडोला, विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग हे० न० ब० ग० केन्द्रीय विश्वविद्यालय, पौड़ी परिसर।
5. प्रो० नरेन्द्र सिंह राना, भूगोल विभाग, बी०एच०यू० वाराणसी।
6. डॉ० अरूण एस० मगर, विभागाध्यक्ष भूगोल विभाग, टी०सी० कॉलेज बारामती, पुणे, महाराष्ट्र।
7. डॉ० संभाजी बनसोडे, एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल, एस०एम०एस०एम०पी० कॉलेज, नाकेपुते, शोलापुर, महाराष्ट्र।
8. डॉ० सूर्यकांत बाघमारे, बी०एल०डी०एस० आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कालेज, टिकोता (विजयपुर) कर्नाटक।



आयोजन समिति

1. पंजीकरण समिति - डॉ० देवकृष्ण, डॉ० राजीव दूबे, डॉ० अखिलेश कुमार सिंह, डॉ० बीरेंद्र चन्द, डॉ० मंजीत भण्डारी।
2. स्वागत समिति - डॉ० लक्ष्मी नौटियाल, डॉ० दुर्गेश नन्दिनी, श्री उमेश चन्द्र बंसल।
3. प्रकाशन समिति - डॉ० प्रवेश कुमार मिश्र, डॉ० देवकृष्ण, डॉ० राजीव दुबे।
4. सांस्कृतिक कार्यक्रम समिति - श्री प्रदीप कुमार, डॉ० दुर्गेश नन्दिनी, श्री अरूण भट्ट, श्रीमती लक्ष्मी नेगी।
5. अनुशासन समिति - डॉ० शिवेन्द्र सिंह चन्देल, डॉ० मनोज कुमार सिंह, श्रीमती बन्दना सिंह।
6. मुख्य/विशिष्ट अतिथि व्यवस्था समिति - डॉ० गोपेश कुमार सिंह, डॉ० मनोज कुमार सिंह, श्री उमेश चन्द्र बंसल।
7. जलपान/भोजन व्यवस्था समिति - श्री राजकुमार पाल, श्री संदीप लिंगवाल।
8. आवास व्यवस्था समिति - डॉ० शिवेन्द्र सिंह चन्देल, डॉ० अखिलेश कुमार सिंह।
11. ग्रामीण जनों का प्रतिभाग एवं समलौण पौध रोपण व्यवस्था- श्री वीरेन्द्र गोदियाल।



विषय सूची

क्र. सं.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ संख्या
1	Human Development and Environment	Dr. Rakesh Negi Anant	1
2	Forest Fires and Climate Change: A Vicious Cycle of Environmental Degradation	Adarsh Tripathi	1
3	“Harmony with Nature: Role of Cultural Practices in Environmental Conservation in Uttarakhand”	Mohan Singh Panwar	2
4	Environmental Education and Sustainable Consumption: A Study of Awareness and Behavioral Change Among Youth	Himanshu Saklani,	2
5	The Role of the Institutional Environment in Shaping Sustainability and Climate Change Education in Developing Countries	Dr. Devendra Singh	3
6	Does Physical Activities Environment Enhance The Psychological Benefits of Exercise For Women	Mr. Ram Singh Negi	3
7	Physical and Emotional Benefits of Different physical activity Environments Designed for Treadmill Running	Mr. Rajkumar Pal	4
8	A Study on Forest Fires in Accelerating Ecological Degradation and Climate Risk in Mussoorie Forest Range, Dehradun, Uttarakhand	Dr. Jyoti Prakash Gupta	4
9	"Global Warming and Its Global Impact"	Mr. Saurabh Kumar Singh	5
10	Socio-Economic and Ecological Consequences of Forest Fires in Uttarakhand	Dr. Shivanand Nautiyal	5
11	Organic Farming and Rural Livelihoods: A Socio-economic Study of Tehri Garhwal, Uttarakhand	Sukesh Singh	6
12	Sustainable Development and Environmental Education with Special Referenceto Garhwal	Prof. Swati Negi	6
13	Role of Tribal Women in Preserving and Conserving Forests in the Nanded Region, Maharashtra.	Jayavrdhan V Balkhande	7
14	Enhancing Food Security Through Climate-Resilient Millet Crops Amid Climate Change: Insights from Hill Farming System of Uttarakhand	Ankit Sati, R.s. Negi,	7
15	Role of Artificial Intelligence in Forest Fire Management ; A Comprehensive Review of Current Approaches, Challenges and Future Directions	Krishna Negi	8
16	Forest Fire Dynamics in Chamoli, Uttarakhand: A Comprehensive Analysis (2000-2024)	Kunwar Singh	8
17	Learning from the Flames: Indigenous Knowledge Systems and Community Education on Fire and Climate Resilience	Vandana Sharma,	9
18	The Impact of Climate Change on the Environment: A Comprehensive Analysis	Dr. Dilip Akaram Gade	9
19	Role of Women in Forest Conservation in Uttarakhand	Savita	10
20	The Role of Folk Culture in Forest Conservation.	Dr. Rakesh Bhatt	10
21	“Empowering local communities: The role of self-efficacy in promoting forest conservation”	Prof. Anil Kumar Nautiyal	11

22	Sustainable Development and Environmental Education	Durgesh Kapurwan,	11
23	Environmental Awareness and Environmental Attitude of College Students" (With special Reference of District Pauri Garhwal of Uttarakhand State)	Dr. R. S. Chauhan	12
24	Fire on the Hills: Assessing Local Resident's Attitudes Towards Mountain Forest Fires and Their Climatic Impact in Srinagar Garhwal, Uttarakhand	Dr. Devendra Singh	13
25	Climate-Induced Forest Fires and Their Environmental Impact in Uttarakhand	Shivam Sajwan	14
26	The Role of Environmental Education in Achieving the Goals of Sustainable Development	Dr. Ramakant Yadav	14
27	The Effect of Environment on Physical Fitness	Dr. Manjeet Singh Bhandari	15
28	Urban Expansion and Its Impact on Vegetation Cover in Dehradun City	J.P. Gupta	15
29	उत्तराखण्ड राज्य : वन नीति, उद्देश्य और संरक्षण नीति	डॉ० देव कृष्ण थपलियाल	16
30	“जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर प्रभाव”	डॉ० शिवेन्द्र सिंह चन्देल	16
31	“वनाग्नि प्रबन्धन में पारम्परिक ज्ञान एवं आधुनिक चेतना”	डॉ० प्रवेश कुमार मिश्रा	17
32	जलवायु परिवर्तन का जीवन पर प्रभाव	डॉ०. मनोज कुमार सिंह	17
33	उत्तराखण्ड में वनाग्नि एक पर्यावरणीय आपदा	डॉ० प्रमोद कुमार नौडियाल	18
34	वनाग्नि की रोकथाम में तकनीकी उपायों की आवश्यकता	संदीप लिंगवाल	18
35	“वन संरक्षण में भारतीय नारी की भूमिका”	डॉ० बालविद्या प्रकाश	19
36	भारत में वनाग्नि की स्थिति और चुनौतियाँ	डॉ० आलोक कृष्ण द्विवेदी	19
37	पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव	श्री मनसा राम	20
38	भारत में पर्यावरणीय नीतियों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव	शुभम सुयाल	20
39	संपोषणीय विकास और वनसंरक्षण	डॉ० श्याम मोहन सिंह,	21
40	वन विनाश का सम्भावित समाधान	दिलीप कुमार	21
41	वन संरक्षण में महिलाओं की भागीदारी	उमेश चन्द्र बंसल	22
42	वनाग्नि आपदा: कारण एवं प्रभाव (जनपद चम्पावत के विशेष सन्दर्भ में)	श्रीमती सुनीता नेगी	22
43	वनाग्नि - एक पर्यावरणीय आपदा	डॉ० जितेन्द्र कुमार नेगी	23
44	जलवायु परिवर्तन और मानव स्वास्थ्य	श्रीमती बन्दना सिंह	23
45	पर्यावरण प्रदूषण और प्रकृति	डॉ० बीरेन्द्र चन्द	24
46	वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी	डॉ० लक्ष्मी नौटियाल	24
47	प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था और आरण्य संस्कृति	डॉ० पंचम सिंह रावत	25
48	सतत विकास और वन संरक्षण के लिये नीतियाँ	प्रदीप कुमार	26
49	वनाग्नि का जैव विविधता पर प्रभाव	पी०एल० शाह	26
50	जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर प्रभाव	डॉ० गोपेश कुमार सिंह	27
51	भारत में वनाग्नि की स्थिति और चुनौतियाँ	डॉ० अखिलेश कुमार सिंह	27

52	पर्यावरण उन्नयन में रवीन्द्रनाथ टैगोर का योगदान	अयोध्या प्रसाद मिश्र	28
53	उत्तराखण्ड के पारिस्थितिकी तंत्र पर वन अग्नि का प्रभाव	शिशुपाल शोधार्थी	29
55	वन अग्नि और जलवायु परिवर्तन का पारस्परिक संबंध	डा० सुनील कुमार सिंह	29
55	वनाग्नि के संदर्भ में उत्तराखण्ड : कारण प्रभाव एवं समाधान	डॉ दुर्गेश नन्दिनी	30
56	''उत्तराखण्ड में वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी''	डॉ० अभिलेख जगूड़ी	30
57	उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में जल, वायु एवं अग्नि संकट: भारतीय ज्ञान प्रणाली एवं स्थानीय शिक्षा परंपराओं की भूमिका	देवेन्द्र सिंह	31
58	उत्तराखण्ड के पर्वतीय पारिस्थितिकीय तंत्र पर वनाग्नि के प्रभाव का अध्ययन	अरविन्द कुमार	31
59	संधारणीय विकास के लिए शिक्षा	डॉ० बाल गोविन्द मौर्य	32
60	वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं सतत विकास: जलवायु परिवर्तन के व्यापक प्रभावों के संदर्भ में	गीता खड्गूड़ी	33
61	उत्तराखण्ड राज्य में वनाग्नि एक पर्यावरणीय आपदा	डॉ० नीमा भेतवाल	33
62	बौद्ध कालीन भारत में वन संरक्षण : एक अवलोकन	डॉ० राजीव दूबे,	34
63	वनाग्नि का जैव विविधता पर प्रभाव	पी०एल० शाह	34
64	नवगीत साहित्य में प्राकृतिक विपदाएँ	जयमाला दूबे	35
65	हिन्दी उपन्यासों में जलवायु परिवर्तन	डॉ० प्रियम्बदा मिश्रा	35
66	पर्यावरणीय सचेतना और शिक्षा	डॉ० अमित कुमार	36
67	वैश्विक ऊश्मन एवं उसका वैश्विक प्रभाव	डॉ० अखिलेश्वर कुमार द्विवेदी	36

Human Development and Environment

Dr. Rakesh Negi Anant

Assistant Professor

Deptt. of Political Science HNBGU Srinagar

ABSTRACT

Human development and the environment is a broad and interconnected subject that explores the relationship between human progress and the natural world. Human development refers to the process of improving people's well-being, expanding their freedoms, and providing them with opportunities to live long, healthy, and productive lives. The environment includes all naturally occurring living and non-living things on Earth—air, water, land, flora, fauna, and ecosystems. It is the source of resources and the surroundings in which human activities take place. Human development depends on environmental resources, but development activities often put pressure on these systems. Key relationships include: Positive relationships: Better education and awareness can promote sustainable practices. Technological innovations can increase efficiency and reduce waste. Better health and infrastructure reduce vulnerability to environmental hazards. Negative impacts: Resource depletion (e.g., deforestation, mining, overuse of water) Pollution (air, water, and soil) . Climate change due to fossil fuel use Biodiversity loss from habitat destruction. Sustainable Development: The Middle Way Sustainable development aims to balance human needs with environmental protection. It is development that: “meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs.



Forest Fires and Climate Change: A Vicious Cycle of Environmental Degradation

Adarsh Tripathi

Research Scholar

DBS PG College, Dehradun

ABSTRACT

Forest fires have emerged as one of the most pressing environmental challenges of the 21st century. Driven by both natural and anthropogenic factors, their frequency and intensity have been exacerbated by climate change. In turn, forest fires contribute significantly to global warming by releasing vast quantities of carbon dioxide and other greenhouse gases into the atmosphere. As per the data of centre for Research on the Epidemiology of Disasters, since 1911, there have been at least 470 wildfire disaster situations reported worldwide which have resulted in at least \$120 billion in damages and at least 10 or more fatalities or 100 or more injured. In its annual Frontiers report, released on February 17, 2022, the United Nations Environment Programme (UNEP) cautioned that wildfires are expected to worsen over years to come. Rising global temperatures, prolonged droughts and altered precipitation patterns—hallmarks of climate change—contribute to heightened fire frequency, intensity and duration. Concurrently, forest fires release vast amounts of carbon dioxide, methane and other greenhouse gases, exacerbating atmospheric warming and disrupting carbon sinks. Through a multi disciplinary approach incorporating climatology, ecology and remote sensing data, the study analyzes global fire trends and their correlation with climatic anomalies. It also explores regional case studies to illustrate the socio-environmental impacts of recurring fires, particularly in fire-prone ecosystems such as the Amazon, Siberia and Australia. The findings highlight the urgent need for integrated fire management strategies, reforestation efforts and climate mitigation policies to address this dual-threat phenomenon. Enhanced early warning systems, community engagement and sustainable land use practices are proposed as critical solutions. This research underscores that combating forest fires is inseparable from addressing climate change, calling for coordinated global action to protect ecosystems and stabilize the climate system.



“Harmony with Nature: Role of Cultural Practices in Environmental Conservation in Uttarakhand”

Mohan Singh Panwar

Department of Geography
School of Earth Sciences
Hemvati Nandan Bahuguna Garhwal University
Srinagar Garhwal, Uttarakhand

Jaya Aswal

Department of Geography
School of Earth Sciences
Hemvati Nandan Bahuguna Garhwal University
Srinagar Garhwal, Uttarakhand

ABSTRACT

Uttarakhand, a Himalayan state in northern India, reflects a deep bond between cultural traditions and the natural environment. This study examines how local beliefs, customs, and festivals contribute to the conservation and sustainable use of natural resources. Nature is not only a source of livelihood but is revered as sacred; rivers, forests, and mountains are often worshipped. Festivals like Harela, Phooldei, and Makar-Sankranti promote tree planting, organic farming, and ecological awareness. Traditional agricultural practices such as Barahanaja and the use of locally sourced materials in house construction reflect a lifestyle rooted in environmental harmony. Grassroots movements like the Chipko Andolan and Beej Bachao Andolan, led primarily by local communities and women, have been instrumental in protecting forests and preserving indigenous seeds. These cultural practices serve both ecological and educational purposes, passing down conservation values through generations. The study emphasizes that such traditions are essential for promoting sustainable living in fragile mountain ecosystems. Preserving this cultural heritage is crucial not only for environmental protection but also for maintaining the identity and resilience of local communities.

Keywords: Uttarakhand, culture, environment, conservation, traditional practices, sustainable development, Himalayas.



Environmental Education and Sustainable Consumption: A Study of Awareness and Behavioral Change Among Youth

Himanshu Saklani,

Research Scholar, Department of Education
Govt. PG College Gopeshwar Chamoli

Durgesh Kapurwan,

Research Scholar, Department of Education
Govt. PG College Gopeshwar Chamoli

ABSTRACT

A key element of sustainable development in the age of resource depletion, climate change, and environmental deterioration is sustainable consumption. It highlights the prudent use of natural resources to satisfy current demands without endangering future generations. In this regard, environmental education is a transforming factor in the development of young brains by promoting environmental awareness, comprehension, and responsible behaviour.

This study aims to evaluate how environmental education affects young people, specifically in terms of their awareness of and changes in behavior linked to sustainable consumption. College and university students were surveyed and interviewed as part of the project to examine how environmental awareness affects everyday behaviours including recycling, cutting back on plastic use, saving energy, and selecting eco-friendly items.

According to research, kids who receive environmental education exhibit increased environmental sensitivity and are more likely to lead sustainable lives. According to the study's findings, incorporating environmental education within the official educational system can greatly aid in producing a generation of responsible and ecologically aware people. As a result, encouraging sustainable consumption and attaining long-term environmental sustainability depend heavily on environmental education.

Key World : Environmental Education, Sustainable development.



The Role of the Institutional Environment in Shaping Sustainability and Climate Change Education in Developing Countries

Dr. Devendra Singh

Assistant Professor, Department of Education,
H.N.B. Garhwal University (A Central University),
Srinagar Garhwal, Uttarakhand (India)

Monika Dobhal

Research Scholar, Department of Education,
H.N.B. Garhwal University (A Central University),
Srinagar Garhwal, Uttarakhand (India)
E-mail : monikaddobhal11@gmail.com)

ABSTRACT

India's vulnerability to climate change, combined with its rapidly evolving education sector, places urgent emphasis on integrating sustainability and climate change education (CCE) within formal learning systems. This literature review critically examines existing scholarship on the role of the institutional environment in shaping sustainability and climate change education in Indian higher education institutions. It synthesizes research spanning national policies, institutional governance, curriculum reforms, faculty engagement, and cross-sectoral collaborations to assess how educational institutions are responding to the climate crisis. Drawing from peer-reviewed studies, government reports, and institutional case analyses, the review identifies key enablers of effective CCE integration: the National Education Policy (NEP 2020), University Grants Commission (UGC) initiatives, interdisciplinary programs, and partnerships with civil society organizations. These drivers are seen to positively influence curriculum innovation, climate literacy, and student participation in sustainability practices. However, significant challenges persist, including policy-practice gaps, uneven institutional capacities, insufficient training of educators, and lack of localized, culturally relevant pedagogies. The review also highlights the theoretical underpinnings that connect institutional theory, educational reform, and sustainability transitions in the Indian context. It reveals a growing but fragmented body of literature, with limited longitudinal studies on institutional change or impact evaluation of climate education initiatives. The findings emphasize the need for a cohesive national research agenda that connects institutional dynamics with measurable educational outcomes in climate literacy and action. This paper concludes by identifying critical gaps and proposing future directions for research and practice. These include fostering interdisciplinary collaboration, expanding faculty development programmes, enhancing monitoring frameworks, and contextualizing global sustainability models to suit India's socio-economic and environmental realities.

Keywords: Institutional Environment, Climate Change Education, Sustainability Education, Higher Education, NEP 2020, Curriculum Reform.



Does Physical Activities Environment Enhance The Psychological Benefits of Exercise For Women

MR. RAM SINGH NEGI

Assistant Professor
Raath Mahavidhyalaya, Paithani

ABSTRACT

Two experiments examined the psychological benefits of physical activities environment. In Experiment 1, 128 female college students were assigned to 1 of 3 laboratory conditions that differed only in with whom they were exercising; in Experiment 2, 88 students were assigned to 1 of 4 walking conditions that differed in the environment (i.e., indoors vs. outdoors) and whom they were with. Before and after exercise, participants completed several mood and enjoyment measures. Participants in Experiment 1 were most calm when exercising alone than with others, and participants in Experiment 2 found the experience most enjoyable if outdoors. Our findings suggest that perceived enjoyment and outdoor exercise may account for some of the psychological benefits of exercise for women. (PsycINFO Database Record (c) 2016 APA, all rights reserved)



Physical and Emotional Benefits of Different physical activity Environments Designed for Treadmill Running

MR. RAJKUMAR PAL

(Assistant Professor) Department of Physical Education

Raath Mahavidhyalya Paithani

ABSTRACT

(1) Background: Green physical activity promotes physical health and mental wellbeing and interesting questions concern effects of this information on designing indoor exercise environments. This study examined the physical and emotional effects of different nature-based environments designed for indoor treadmill running;

(2) Methods: In a counterbalanced experimental design, 30 participants performed three, twenty-minute treadmill runs at a self-selected pace while viewing either a static nature image, a dynamic nature image or self-selected entertainment. Distance ran, heart rate (HR) and five pre-and post-exercise emotional states were measured;

(3) Results: Participants ran farther, and with higher HRs, with self-selected entertainment compared to the two nature-based environment designs. Participants attained lowered anger, dejection, anxiety and increased excitement post exercise in all of the designed environments. Happiness increased during the two nature-based environment designs compared with self-selected entertainment;

(4) Conclusions: Self-selected entertainment encouraged greater physical performances whereas running in nature-based exercise environments elicited greater happiness immediately after running.

Keywords : green physical activity; environmental design; happiness; ecological dynamics; indoor exercise environments



A Study on Forest Fires in Accelerating Ecological Degradation and Climate Risk in Mussoorie Forest Range, Dehradun, Uttarakhand

Dr. Jyoti Prakash Gupta

Professor, Department of Geography,

D.B.S. (P.G.) College, Dehradun

Mantosh Kumar Gupta,

Research Scholar, Department of Geography,

D.B.S. (P.G.) College, Dehradun

ABSTRACT

The Mussoorie Forest Range in Dehradun, Uttarakhand, is situated in a highly sensitive Himalayan ecosystem increasingly threatened by frequent forest fires. It was observed that the highest number of fires occurred between March and May during the fire season in the forest range. Besides the immediate loss of lives and property, the following disasters resulted in a series of ecological imbalances. According to the forest department of Uttarakhand, from Nov 2024 to April 2025 there were 44 forest fire incidents, affecting 42 hectares of forest area. These sites are represented by some of the important tree species such as Banj Oak (*Quercus incana*), Chir Pine (*Pinus Roxburghii*), etc. Moreover, recurrent forest fires are found to contribute significantly to regional greenhouse gas emissions, thus exacerbating local climate vulnerability. The primary objectives are to map the spatial and temporal patterns of forest fires, analyse their ecological impacts—particularly on vegetation, soil health, and biodiversity—and evaluate how these fires influence local climatic conditions. This study examines the effect of forest fires in increasing ecological degradation and climate risk in the region, combining geospatial analysis (used to identify fire hotspots and assess vegetation change), ecological investigations, and community-level assessments.

Keywords: Forest fires, Ecological imbalances, Ecological degradation, Disasters



"Global Warming and Its Global Impact"

Mr. Saurabh Kumar Singh

(Assistant Professor) Department of Education

Govt. Degree College, Pavo

(Pauri Garhwal) Uttarakhand

ABSTRACT

Global warming, a critical component of climate change, has emerged as a defining environmental challenge with profound and far-reaching consequences for the planet. This research investigates the underlying causes of global warming, including the intensified greenhouse gas emissions from anthropogenic sources such as fossil fuel combustion, deforestation, industrialization, and unsustainable land-use practices.

The study analyzes how rising global temperatures are contributing to melting polar ice caps, rising sea levels, extreme weather patterns, biodiversity loss, and disruptions in agricultural productivity. It also explores the socioeconomic ramifications, particularly in vulnerable regions of the Global South, including increased poverty, climate-induced migration, and public health crises.

Drawing on data from international bodies such as the IPCC (Intergovernmental Panel on Climate Change) and the World Meteorological Organization (WMO), the research highlights the urgency of implementing global mitigation strategies, such as transitioning to renewable energy sources, enhancing carbon sinks, enforcing climate policies, and strengthening international climate agreements.

This paper concludes that addressing global warming requires a multidimensional, collaborative, and science-driven approach, combining technological innovation with behavioral change and equitable climate governance to ensure planetary sustainability and resilience.

Keywords: Global Warming, Greenhouse Gases, Climate Change, Sea Level Rise, Biodiversity Loss, Climate Policy, Renewable Energy



Socio-Economic and Ecological Consequences of Forest Fires in Uttarakhand

Dr. Shivanand Nautiyal

Govt. P.G. College Karnaprayag, Chamoli

Dr.R.C. Bhatt

Assistant Professor, Dept of Geography

ABSTRACT

Forest fires in Uttarakhand have emerged as a significant environmental and socio-economic concern, primarily due to their increasing frequency and intensity in recent decades. These fires, often triggered by a combination of natural factors such as dry conditions and human activities like agricultural burning and carelessness, pose serious threats to biodiversity, ecosystem services, and local livelihoods. On the Ecological front, repeated fires degrade forest biodiversity, disrupt wildlife habitats and alter natural regeneration processes, leading to soil erosion and reduced ecosystem resilience. The complex topography and prevalent chir pine forests, which are highly flammable, exacerbate the problem. Climate change, with its rising temperatures and erratic rainfall patterns, further contributes to fire vulnerability. The local community gets affected with these forest fires as they are highly dependent on forest for fuel, fodder and timber. This study examines the interlinked socio-economic and ecological impacts of forest fires in Uttarakhand and highlights the urgent need for integrated fire management strategies that combine community participation, policy interventions and technological solutions to mitigate these adverse effects.

Keywords: Forest Biodiversity, ecosystem resilience, erratic rainfall, fire management



Organic Farming and Rural Livelihoods: A Socio-economic Study of Tehri Garhwal, Uttarakhand

Sukesh Singh

Research Scholar, Department of Geography,
D.B.S.P.G. College, Dehradun

J. P. Gupta

Associate Professor, Department of Geography,
D.B.S.P.G. College, Dehradun.

Gaurav

Assistant Professor, Department of Geography,
Indraprastha College for Women, University of Delhi

Siddharth Rana

Research Scholar, Department of Geography,
H.N.B. Garhwal University, Srinagar Garhwal

Corresponding Author- Sukesh Singh, e-mail– Esukesh.rawat94@gmail.com

ABSTRACT

Organic farming has emerged as a sustainable agricultural practice with significant potential to improve rural livelihoods, especially in ecologically sensitive and agrarian regions such as Tehri Garhwal, Uttarakhand. This study examines the socio-economic status of organic farmers in Tehri Garhwal district of Uttarakhand, through a geographical lens. Against the backdrop of growing interest in sustainable agriculture in the Indian Himalayan Region, the research assesses the impact of organic farming practices on rural livelihoods. As per recent government reports, Uttarakhand has over 1.24 lakh hectares under organic cultivation, with Tehri Garhwal being one of the actively participating districts. Primary data collected through structured interviews, field surveys, and participatory observations were analyzed to understand income patterns, landholding sizes, crop preferences, and access to markets and government support schemes. The study reveals that farmers practicing organic agriculture in Tehri Garhwal experience 20–25% higher returns on certain high-value crops such as pulses, millets, and medicinal herbs, yet face persistent challenges related to declining yields during transition, lack of certification support, and limited infrastructure for storage and transport. Despite these constraints, organic farming has significantly improved health outcomes and contributed to environmental sustainability by reducing dependence on chemical inputs. The findings underscore the need for integrated development strategies that enhance economic resilience, strengthen institutional linkages, and ensure equitable growth for small and marginal organic farmers in the hilly regions of Uttarakhand.

Key Words: - Organic Farming, Tehri Garhwal, Rural Livelihoods, Sustainable Agriculture, Himalayan Region



Sustainable Development and Environmental Education with Special Reference to Garhwal

Prof. Swati Negi

Head, B.Ed. Department

Government PG College, Gopeshwar (Distt- Chamoli)

Email: swatinegi2008@gmail.com

ABSTRACT

Sustainable development is a dynamic approach integrating economic growth, social inclusion, and environmental protection. In fragile ecosystems like the Garhwal Himalayas, it becomes a cornerstone for maintaining ecological balance and cultural vitality. This paper examines how environmental education contributes to sustainable development in the Garhwal region of Uttarakhand. Drawing from traditional ecological knowledge, landmark movements like Chipko, and local case studies in sustainable agriculture, eco-tourism, and forest governance, the paper highlights the interdependence of community awareness, policy, and pedagogy. It presents educational interventions that reinforce conservation ethics and explores how the convergence of indigenous wisdom and modern education systems can create resilient, eco-conscious societies. Through grounded examples and comprehensive references, this work advocates for a region-specific, participatory model of environmental education in mountainous regions.



Role of Tribal Women in Preserving and Conserving Forests in the Nanded Region, Maharashtra.

Jayavrdhan V Balkhande

Department of Zoology

Digambarrao Bindu ACS College, Bhokar Dist. Nanded. (Maharashtra)

Email: cageculture2014@gmail.com

ABSTRACT

Forests are among the most vital natural resources on the planet, playing a significant role in fostering economic development while ensuring ecological security. They regulate climate, conserve soil and water, support biodiversity, and act as carbon sinks, thereby contributing to global environmental stability. Beyond their ecological functions, forests also underpin the livelihoods of millions of people, particularly indigenous and tribal communities who have lived in harmony with forest ecosystems for generations. In India, forests cover approximately 21% of the geographical area and are home to a rich tapestry of flora and fauna. More importantly, they sustain nearly 750 officially recognized Adivasi (tribal) communities, who constitute about 8.6% of the country's population. These communities have deep-rooted cultural, spiritual, and economic ties to the forest. Their lives are intricately woven with the rhythms of the natural world, and their traditional knowledge systems offer valuable insights into sustainable forest management. Despite their contributions, tribal communities often remain marginalized in forest governance. However, recent decades have seen increased recognition of their role in conservation efforts, especially through participatory forest management models. Tribal women, in particular, have emerged as key agents in these efforts, balancing resource use with conservation, and ensuring the sustainability of both their livelihoods and the forest ecosystems they depend upon. This report explores the critical role played by tribal women in forest conservation in the Nanded district of Maharashtra. It highlights how their dependence on non-timber forest products (NTFPs), coupled with indigenous knowledge and community practices, makes them indispensable to the sustainable management of forest resources.



Enhancing Food Security Through Climate-Resilient Millet Crops Amid Climate Change: Insights from Hill Farming System of Uttarakhand

Ankit Sati, R.S. Negi,

Department of Rural Technology, School of
Agriculture & Allied Science,
H.N.B Garhwal University (Central University)
Srinagar, Uttarakhand-246174, India

J. S. Butola, & Santosh Singh

Department of Forestry & Natural Resources,
School of Agriculture & Allied Science,
H.N.B Garhwal University (Central University)
Srinagar, Uttarakhand-246174, India

Correspondence Author: e-mail – singhrawat.santosh@gmail.com

ABSTRACT

Millets, known as "nutri-cereals," are small-grained crops celebrated for their resilience, nutritional value, and adaptability to challenging environments. In the hill region of Uttarakhand, millets such as finger millet (ragi), barnyard millet, and foxtail millet thrive due to their low water requirements, short growing seasons, and ability to grow on marginal soils. This article explores the suitability of millets for Uttarakhand's hilly terrain, their current status, nutritional benefits, and potential for sustainable agriculture. In the context of growing climate change challenges, the role of millets as climate-resilient crops becomes increasingly significant. The article also examines government support, climate resilience, market potential, and economic growth prospects, supported by data from government sources. The findings underscore millets as a key to the region's food security, environmental sustainability, and economic upliftment amid the threats posed by climate change.

Keywords: Climate-resilient crops, Hill Agriculture, Food Security, Millets, Climate Change



Role of Artificial Intelligence in Forest Fire Management ; A Comprehensive Review of Current Approaches, Challenges and Future Directions

Krishna Negi

Research Scholar

Education, DoE HNBGU Srinagar Garhwal

H.N.B.G.U. Srinagar Garhwal

ABSTRACT

Forests, as crucial ecological assets, are increasingly imperilled by the escalating frequency and intensity of wildfires driven by climate change, prolonged droughts, and expanding human activity. Traditional forest fire management approaches, often reactive and manually intensive, are proving inadequate to cope with the dynamic, fast-evolving nature of modern wildfires. In response, Artificial Intelligence (AI) technologies are emerging as transformative tools in wildfire management, offering enhanced capabilities across the wildfire lifecycle from early detection to post-fire assessment. This paper presents a comprehensive review of the current state of AI applications in forest fire management, emphasizing machine learning (ML), deep learning (DL), computer vision, remote sensing, and AI-IoT integration. Advanced ML algorithms now enable predictive risk mapping by analysing meteorological patterns, vegetation indices, and geospatial features. Deep learning models, such as convolutional neural networks (CNNs) and U-Net, are being applied to multi-spectral and thermal satellite data to identify fire-prone regions and assess burn severity with high precision. Meanwhile, AI-powered IoT systems, leveraging wireless sensors and drone surveillance, facilitate real-time monitoring and rapid alerts, significantly improving response times. Hybrid AI-GIS frameworks further support strategic resource allocation by integrating spatial variables for fire susceptibility mapping. Despite these advancements, several technical and ethical challenges persist. These include data scarcity in remote areas, model generalizability across diverse terrains, interpretability issues (the “black-box” problem), and real-time data fusion complexities. Additionally, concerns around accountability and bias in automated decision-making warrant careful scrutiny. This review underscores the pivotal role of AI in shaping proactive, data-driven, and sustainable wildfire management strategies in an era of increasing environmental volatility.

Keywords: Artificial Intelligence (AI), Forest Fire Management, Machine Learning (ML), Deep Learning (DL), Remote Sensing, Wildfire Detection, Fire Spread Prediction, IoT, GIS,



Forest Fire Dynamics in Chamoli, Uttarakhand: A Comprehensive Analysis (2000-2024)

Kunwar Singh

Research Scholar, Department of Geography,
D.B.S. (PG) College, Dehradun.

Vijay Bahuguna

Associate Professor, Department of Geography
D.B.S. (PG) College Dehradun.

ABSTRACT

This Study Examines Forest Fire Incidents in Chamoli District, Badrinath Division, from 2000 to 2024, with a detailed focus on 2024 Data and Contextual Information for Earlier Years. In 2024, 128 Fires Impacted 115.55 Hectares (106.2 Hectares in Reserved Forest And 9.35 Hectares in Civil/ Van Panchayat Forests), Resulting in An Estimated Financial Loss of Rupees 328650, Predominantly Affecting Pine Forests. The Fires Peaked in April and May, With the Nandprayag and Chamoli Ranges Being the Most Affected. For 2000-2023, Specific Chamoli data are scarce, but Regional Trends Indicate a Rising Frequency of Fires in Uttarakhand, with over 48,000 hectares burned statewide since 2000. Driven by climate change and human activities like agriculture, Chamoli's Vulnerability Aligns with this Pattern. With Incidents Like the January 2024 Kamyar Van Panchayat Fire Highlighting Precipitation Deficits as A Key Risk Factor. This Analysis Highlights the Season and Spatial Distribution of Fires, Emphasizing the Urgent Need for Enhanced Fire Prevention, An Early Warning System, And Community-Based Management Strategies to Safeguard Chamoli's Ecologically Critical Forest Ecosystem.



Learning from the Flames: Indigenous Knowledge Systems and Community Education on Fire and Climate Resilience

Vandana Sharma,
Professor, Department of Education,
H.N.B.G.U, Srinagar Garhwal
Email- dranilnautiyal03@gmail.com

Prof. Anil Kumar Nautiyal
Research Scholar, Department of Education
H.N.B.G.U, Srinagar Garhwal
Email- Vandnasrma1995@gmail.com

ABSTRACT

In the face of escalating climate change, India is witnessing a rise in the frequency and intensity of forest fires, threatening biodiversity, rural livelihoods, and ecological stability. This review explores how Indigenous knowledge systems particularly those practiced by Adivasi and forest-dwelling communities can be integrated into community education to enhance fire and climate resilience across India's diverse ecological zones. Drawing on literature from environmental science, forest governance, education, and Indigenous studies, the paper highlights the traditional fire management strategies used in regions like the Western Ghats, Eastern Himalayas, and Central Indian tribal belts. These Indigenous practices such as controlled undergrowth burning, seasonal fire cycles, and sacred forest protection have historically regulated ecosystems, minimized fire damage, and fostered forest regeneration. However, such knowledge systems have long been marginalized by colonial-era forest policies and post-independence legislation, particularly the Wildlife Protection Act (1972) and certain interpretations of the Forest Conservation Act (1980), which criminalized traditional practices and alienated Indigenous communities from their ecological roles. The paper argues for a transformative, community-driven educational approach that integrates Traditional Ecological Knowledge (TEK) into India's climate education frameworks. It calls for participatory models of environmental learning that empower local communities, particularly youth and women, to become active stewards of climate resilience. By decolonizing environmental education and recognizing the legitimacy of Indigenous knowledge, India can create more inclusive, effective, and culturally rooted strategies for climate adaptation and forest fire management.

Keywords: India, Adivasi knowledge, forest fires, traditional ecological knowledge, community education, climate resilience, Indigenous stewardship, decolonization, environmental policy, forest governance



The Impact of Climate Change on the Environment: A Comprehensive Analysis

Dr. Dilip Akaram Gade
Associate Professor, Department of Geography
P.V.P. Mahavidyalaya, Kavathe Mahankal Dist- Sangli
Email- dilipgade504@gmail.com

ABSTRACT

Climate change, driven by anthropogenic greenhouse gas emissions, is profoundly altering Earth's environmental systems. Rising global temperatures, extreme weather events, sea level rise, ocean acidification, and biodiversity loss are reshaping ecosystems, threatening natural resources, and disrupting human livelihoods. This paper examines the multifaceted impacts of climate change on the environment, drawing on recent data and projections. Key findings include a 1.10 C temperature increase since pre-industrial times, a 3.7 mm/year sea level rise, and up to 30% of species at risk of extinction with a 20 C warming. The study underscores the urgency of mitigation and adaptation strategies to protect ecosystems and ensure environmental sustainability.

Key Word: climate change, environment, ecosystem, sustainability.



Role of Women in Forest Conservation in Uttarakhand

Savita

Research Scholar, Dept of Geography,
HNBGU Srinagar Garhwal, Uttarakhand

Crossponding Authors- savibartwal58@gmail.com **ABSTRACT**

Shrish Hari

Research Scholar, Dept of Geography,
D.A.V. PG Collage Dehradun

shrishhari@gmail.com

ABSTRACT: Forest conservation is of paramount importance in Uttarakhand, particularly in the ecologically sensitive highland region of Tehri Garhwal. This mountainous district, characterized by steep terrains, rich biodiversity, and fragile ecosystems, relies heavily on forest resources for ecological balance and local livelihoods. In these remote hill villages, women play a vital role in the conservation and management of forests, given their daily interaction with the environment while collecting firewood, fodder, water, and medicinal herbs. Their contribution to environmental stewardship in Uttarakhand has historical roots, most notably exemplified by the Chipko Movement of the 1970s, which originated in this region. In that movement, village women of Garhwal embraced trees to prevent deforestation—an act that became a global symbol of grassroots environmental activism. Tehri Garhwal, with its scattered settlements and limited infrastructure, presents unique challenges and opportunities for community-based forest management. Women here possess generations of traditional ecological knowledge, enabling them to observe changes in forest patterns, biodiversity, and resource availability. Despite this, patriarchal social norms in rural Uttarakhand often marginalize women's voices in formal forest governance institutions such as forest departments and decision-making committees. However, they continue to influence conservation practices through Van Panchayats (community forest councils) and self-help groups, promoting reforestation and sustainable use of forest resources. Adopting a deductive approach, this study concludes that the inclusion of women in forest conservation is not only advantageous but essential for the long-term ecological sustainability of Uttarakhand's forested hill regions. Empowering women through policy support, educational opportunities, and institutional recognition can enhance both gender equity and environmental outcomes. Therefore, acknowledging and formalizing women's roles in forest management is critical to preserving the natural heritage of Tehri Garhwal and the broader Himalayan landscape.



The Role of Folk Culture in Forest Conservation.

Dr. Rakesh Bhatt

Department of Theatre Studies,
Doon University, Dehradun and
Director of UTSAV Group

ABSTRACT

Water, forest and land are the basic foundations of life in the mountains. The axis of life in the mountains is stuck on these three pillars. But at present man has monopolized these resources and has started unnatural exploitation, which is very dangerous for human life in the near future. On one hand, the density of forests is continuously decreasing, human settlement is happening in an unnatural way, in the race of his business ambitions, man has dug holes in the forests and built big establishments. This trend is constantly hollowing out these three pillars. The continuous decay of water, forest and land, which were our cultural and ritualistic symbols, is our cultural degradation. In the Vedas, Puranas and scriptures, forest has been considered as the protective cover of our life. Today, due to our excessive lust for pleasures, this cover is on the verge of ending. The way fire is raging in the forests is the result of human mistakes, his disrespect towards forests, foolishness and excessive ambition. The remedy for all these complexities lies in our cultural awareness and consciousness. As a result of cultural study of local folk beliefs, folk myths, folk literature and its expansion, we can minimize this grave problem of the present time.

“Empowering local communities: The role of self-efficacy in promoting forest conservation”

Prof. Anil Kumar Nautiyal

Professor,

Department of Education, H.N.B.G.U.

Namita

Research scholar,

Department of Education, H.N.B.G.U.

ABSTRACT

Forest conservation is most effective when local communities actively participate and take ownership of sustainable practices. A key component of influencing their participation is their self-efficacy, which is the belief in ones' own ability to bring the change. This research paper explored how self-efficacy among local communities contributes into promoting forest conservation efforts, particularly in regions of Uttarakhand, where locals are closely dependent on forest resources for their daily needs. From case studies, field interviews, and existing literature reviews the study explored how initiatives like education, awareness campaigns, participatory institutions such as Van Panchayat, and community driven programs contribute to skill building, empowerment and a stronger sense of responsibility. The study also highlighted that undermine self-efficacy, such as inadequate access to resources, marginalization in decision making and cultural barriers. The findings emphasize that fostering self-efficacy through inclusive governance, leadership development and targeted support not only strengthens social dynamics but is also essential for sustainable ecological management.

Keywords: Forest, Conservation, Self-efficacy, Communities.



Sustainable Development and Environmental Education

Durgesh Kapurwan,

Himanshu Saklani

Research Scholar, Department of Education

Govt. PG College Gopeshwar Chamoli

ABSTRACT

The goal of sustainable development, a worldwide imperative, is to satisfy current needs without endangering the capacity of future generations to satisfy their own. It highlights striking a balance between social justice, environmental preservation, and economic progress. Environmental education is essential to accomplishing this aim because it equips people with the values, attitudes, information, and abilities needed to make wise decisions and act responsibly toward the environment.

Understanding the causes and effects of environmental problems like pollution, deforestation, climate change, and biodiversity loss is made easier for people, especially young people, through environmental education. Recycling, sustainable consumerism, and the preservation of energy and water are among the sustainable actions it encourages. When incorporated into both formal and informal educational institutions, environmental education helps students develop their critical thinking, problem-solving, and awareness skills so they can make significant contributions to sustainable development.

The close connection between sustainable development and environmental education is emphasized in this abstract. In order to develop environmentally conscious people and create a resilient, just, and sustainable society for the future, it is imperative that environmental education be included in all educational levels.

Key World: Sustainable Development, Environmental Education.



Environmental Awareness and Environmental Attitude of College Students" (With special Reference of District Pauri Garhwal of Uttarakhand State)

Dr. R. S. Chauhan

Professor and Head Department of B.Ed.,
Govt.P.G. College, Kotdwara,
Pauri Garhwal (Uttarakhand), India
Mob. No. : 7895968788, 8630931954
Email: drrameshsinghchauhan@gmail.com

ABSTRACT

"Environment is the aggregate of all the external conditions and influences affecting the life developing the organism or group of organism."

Environment is the common heritage of the people of the world; its protection through prevention for future and restoration of the past damage is needed an enormous task (Khoahoo 1991). To fulfill this task and to save both man and environment on the earth the environmental orientation for mankind is very essential, because man himself has created all environmental problems. The human beings also receive benefits from the natural environment. But most of the times man forgets his sense of responsibility towards maintaining ecological balance due to personal pleasure and gain.

We are very well aware of the environmental situation in our country. The problems like growing population, the shrinking forests, the eroding soil; the polluted rivers, pollution of air, water, noise, soil and their related aspects have drawn our attention for the need of a new careful and scientific strategy for the long-term planning of development.

Now it has become very clear that there is a need for evolving a plan of action to preserve the environment," and to improve its quality. The environment influences our civilization and way of life since long time. So it is an urgent requirement to create awareness for environmental protection among the people at various levels. In this context, Environmental Education can play a crucial role in developing an awareness and consciousness among the masses of our country.

The main objectives of the study were to investigate the difference in environmental awareness and environmental attitude of college students studying in various government colleges of Pauri district of Uttarakhand state. In the present study, sample comprised 200 Under Graduate and 200 Post Graduate students of urban and rural locality. The present study was conducted by descriptive cum survey method of research and the tabularized data were subjected to statistical treatment by using Mean, S.D. and 't'-test.

The results obtained in the concerned table high light that: Under Graduate students as well as Post Graduate students regarding to their environmental awareness, both the groups had almost equal awareness, while in reference to their environmental attitude Post Graduate students were slightly better than Under Graduate students, but not differ significantly.,

Hence, we can say that, both the group (Under Graduate students as well as Post Graduate students) were almost alike with reference to their environmental awareness and environmental attitude.

Key words - Environmental awareness, Environmental attitude



Fire on the Hills: Assessing Local Resident's Attitudes Towards Mountain Forest Fires and Their Climatic Impact in Srinagar Garhwal, Uttarakhand

Dr. Devendra Singh

Assistant Professor, Department of Education,
HNBGU Srinagar Garhwal, Uttarakhand
Email: -devendra.singh060@gmail.com

Rachna

Research Scholar, Department of Education,
HNBGU Srinagar, Garhwal, Uttarakhand (India)
Email-km.rachna.m.ed@gmail.com

ABSTRACT

In recent years, the mountainous regions surrounding Srinagar Garhwal, located in the Pauri district of Uttarakhand, have witnessed a disturbing increase in the frequency and intensity of forest fires. These recurrent wildfires, often occurring during the dry summer months, have begun to significantly impact not only the rich biodiversity of the region but also the microclimatic conditions experienced by its inhabitants. This research study aims to investigate the attitudes, awareness, and perceptions of local residents toward these mountain forest fires, with a particular focus on how they interpret and experience the resulting climatic changes in their daily lives. Using a descriptive survey research design, this study collected both quantitative and qualitative data from a sample of 250 residents residing in forest-adjacent villages and urban wards of Srinagar Garhwal. A stratified random sampling technique was employed to ensure representation across variables such as age, gender, occupation, education level, and proximity to forested zones. A structured bilingual questionnaire comprising closed-ended items, Liker-scale statements, and open-ended questions was developed to gauge the respondents' level of awareness, perceived causes of the fires, perceived climatic impacts, and willingness to participate in mitigation efforts. The results reveal that a majority of the local population views forest fires as a serious and recurring ecological threat. Respondents reported a noticeable increase in local temperatures, reduced winter snowfall, irregular rainfall patterns, and decreased forest moisture following major fire events. Many also noted an increase in air pollution, smoke-related illnesses, and crop damage, especially among those living in close proximity to frequently burning hillsides. Interestingly, a significant proportion of respondents attributed these forest fires not only to natural causes such as dry leaf litter accumulation and intense summer heat, but also to human negligence, intentional fire-setting for pasture regeneration, and poor forest surveillance. Despite varying levels of formal education, respondents across the sample exhibited a strong cultural and emotional connection with the surrounding natural environment. The study uncovered deep-rooted local knowledge systems and seasonal indicators traditionally used to predict and manage fire outbreaks. However, there also existed a critical gap in scientific understanding regarding the broader climate impact of forest fires, indicating the need for targeted environmental education and community engagement. Importantly, the survey found high levels of willingness among residents to engage in community-based forest protection initiatives, such as volunteering for fire surveillance, participating in forestation drives, and spreading awareness through local institutions like schools, panchayats, and religious gatherings. However, many respondents emphasized the lack of institutional support, training, and timely government response as major barriers to effective community action. This research underscores the urgent need for an integrated policy approach that combines scientific forest management with community participation, traditional ecological knowledge, and climate resilience planning. Strengthening early warning systems, investing in local capacity building, and developing grassroots-level environmental awareness programs are essential steps toward mitigating the long-term socio-climatic impacts of mountain forest fires in Srinagar Garhwal. This study contributes meaningfully to the discourse on climate change adaptation, disaster preparedness, and sustainable forest governance in the Indian Himalayan region, offering valuable insights for researchers, policymakers, educators, and environmental activists alike.

Climate-Induced Forest Fires and Their Environmental Impact in Uttarakhand

Shivam Sajwan

Research Scholar, Department of geography,
Shridev Suman Uttarakhand University Rishikesh Campus
Email: sontysjwn41@gmail.com

ABSTRACT

The increasing frequency and intensity of forest fires in Uttarakhand have become a major environmental concern, particularly in the context of ongoing climate change. Rising temperatures, irregular precipitation patterns, and prolonged dry spells have significantly contributed to the escalation of forest fire incidents in this ecologically sensitive Himalayan region. This study examines the relationship between climate variability and forest fire occurrences, and evaluates their environmental impacts across Uttarakhand's mountainous terrain.

Utilizing meteorological datasets, historical fire records, and satellite imagery from MODIS and Landsat, the research analyzes temporal and spatial trends spanning 2001 to 2023. Remote sensing and Geographic Information System (GIS) techniques are employed to map fire-prone areas and identify hotspots. The study further assesses environmental consequences such as biodiversity loss, soil degradation, alterations in land cover, and increased carbon emissions through integrated geospatial and field-based analyses.

The findings aim to enhance understanding of the complex linkages between climate change and forest fire dynamics in fragile mountain ecosystems, providing critical insights to inform forest management policies, disaster mitigation efforts, and climate adaptation strategies in the region.

Keywords: Forest fires, Climate change, Remote sensing, GIS, Biodiversity loss, Soil degradation, Carbon emissions



The Role of Environmental Education in Achieving the Goals of Sustainable Development

Dr. Ramakant Yadav

Assistant Professor B. Ed. HOD B. Ed. (S.F)
Govt. P. G. College Gopeshwar, Chamoli
Email: ramakant78yadav@gmail.com
Mobile no. 7830739376

Shyam Lal Batiyata

Assistant Professor B. Ed.
Govt. P. G. College Gopeshwar, Chamoli
Email: shyambatiyata@gmail.com
Mobile. 8126667291

ABSTRACT

The objective of sustainable development is to meet present needs without compromising the ability of future generations to meet their own. The UN's Sustainable Development Goals (SDGs) emphasize the importance of attaining social inclusion, economic growth, and environmental preservation in a balanced manner. In this regard, environmental education is crucial to creating informed, responsible, and proactive individuals who can significantly advance sustainable practices.

Through environmental education, environmental issues such as pollution, deforestation, climate change, and biodiversity loss are better understood and brought to light. It helps students and communities develop critical thinking and problem-solving skills as well as responsible behaviors. Environmental education fosters the values of ecological stewardship, sustainable consumerism, and conservation, enabling students to make choices that support environmental sustainability.

Incorporating environmental education into formal and informal learning systems can accelerate the attainment of the SDGs, especially those related to clean water, sustainable communities, high-quality education, and climate action, said the abstract. It concludes that because environmental education offers a strong foundation for creating a more resilient and sustainable society, it is a driving force behind the global movement toward sustainable development.

Key Word : Environmental Education, Sustainable Development .



The Effect of Environment on Physical Fitness

Dr. Manjeet Singh Bhandari

Assistant Professor
Raath Mahavidhyalaya, Paithani

ABSTRACT

Healthy environment helps in controlling an individual's mind, body and soul. It brings together physical and mental disciplines to achieve a peaceful body and mind; it helps manage stress and anxiety and keeps you relaxing climate change also poses a threat to physical fitness. Temperature rise can reduce participation in outdoor activities, which can lead to cardiovascular disease and other health problems. Additionally, extreme weather events and rising water levels can impact physical fitness and health. The environment significantly impacts physical fitness, both positively and negatively. International Environment Day is celebrated every year on 5 June. It was initiated in 1972 by the United Nations General Assembly during the Stockholm Conference on the Human Environment. The first day of the Stockholm Conference was June 5, which was a pivotal moment for discussing the human environment. Therefore, the United Nations General Assembly designated June 5 as World Environment Day. It symbolizes the environment and healthy body, harmony between man and nature, holistic approach towards health and well-being. It is not just about the environment but about discovering a sense of unity with oneself, the world and nature. By changing our lifestyle and creating consciousness, it can help in well-being. Let us work towards adopting Environment Day and introduce its importance to the future.



Urban Expansion and Its Impact on Vegetation Cover in Dehradun City

J.P. Gupta

Professor, Dept. of Geography,
D.B.S.(P.G.) College,
Dehradun, Uttarakhand-248001

Sonali Sihotra

Research Scholar, Dept. of Geography,
Hemvati Nandan Bahuguna
Garhwal University (A Central University),
Srinagar, Uttarakhand-246174

ABSTRACT

Dehradun, the capital city of Uttarakhand, India, has witnessed significant land use and land cover changes over recent decades due to rapid urbanization and population growth. This study focuses on the spatiotemporal changes in vegetation cover in Dehradun, utilizing satellite imagery and remote sensing techniques. Analysis of Landsat data from the past two decades reveals a marked decline in green cover, particularly in the central and southern urban regions. Normalized Difference Vegetation Index (NDVI) values show a consistent decrease, indicating the conversion of vegetated areas into built-up zones and infrastructure projects. Forest fringes and agricultural lands on the outskirts have also been affected by encroachment and land-use change. The decline in vegetation has led to ecological concerns, including increased surface temperatures, reduced biodiversity, and degradation of air quality. The findings highlight the urgent need for sustainable urban planning and conservation strategies to protect the region's natural resources. Continuous monitoring through geospatial technologies is essential to inform policy and promote greener urban development in Dehradun.

Keywords: Dehradun, vegetation cover, land use change, urbanization, NDVI, green cover loss.



उत्तराखण्ड राज्य : वन नीति, उद्देश्य और संरक्षण नीति

डॉ० देव कृष्ण थपलियाल

राजनीति विज्ञान विभाग

सारांश

राठ महाविद्यालय, पैठाणी (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड।

09 नवम्बर 2000 को देश के 27 वें राज्य के रूप में गठित इस पर्वतीय राज्य (उत्तराखण्ड) की सीमाएँ उत्तर में तिब्बत, पूर्व में नेपाल, पश्चिम में हिमाचल प्रदेश तथा दक्षिण में अपने पूर्ववर्ती राज्य उत्तर प्रदेश से मिलती हैं, अपनी प्रचुर प्राकृतिक संपदा के लिए विख्यात राज्य के कुल क्षेत्रफल 53,483 वर्ग किमी० में से 34,651 वर्ग किमी० क्षेत्र वनाच्छादित है। राज्य का उत्तरी भूभाग वृहत्तर हिमालय श्रृंखला का भूभाग है, ये ऊँची हिमालयी चोटियों और हिमनदियों गंगा, यमुना के उद्गम स्थल क्रमशः गंगोत्री और यमुनोत्री है। देश के प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान में (06) छः राष्ट्रीय उद्यान जिम कार्बेट, फूलों की घाटी, नन्दा देवी राष्ट्रीय उद्यान, राजाजी राष्ट्रीय अभयारण्य, गोविन्द पशु विहार, गंगोत्री राष्ट्रीय उद्यान इसी राज्य में स्थित है।

राज्य की वन नीति का सर्वप्रथम उद्देश्य पर्यावरणीय स्थिरता एवं पारिस्थितिकी संतुलन प्रदान करना है। इस मुख्य उद्देश्य की पूर्ति की तुलना में वनों से आर्थिक लाभ प्राप्त करना एक गौण उद्देश्य है। जैव-विविधता एवं वन्य जीवन के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए कार्य-योजना तैयार करना, औषधीय पौधों के संरक्षण और सतत उपयोग करना, राज्य में प्राकृतिक एवं रोपित वनों के साथ-साथ अन्य सभी प्रकार के पौधों का संरक्षण संवर्द्धन, वनों की कटाई और खाली पड़ी भूमि, नदियों तालाबों एवं झीलों और जलग्रहण क्षेत्रों में वृक्षारोपण करना। मौजूदा वनक्षेत्र और वृक्षों की उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास किए जाने की कार्ययोजना। ईंधन की लकड़ी चारा, औषधीय पौधों सहित लघु वनोपज कमजोर वर्ग के लिए लकड़ी, और स्थानीय घरेलू मांगों की मांग और आपूर्ति के बीच अंतर को पाटने के प्रयास तथा राष्ट्रीय-अंतराष्ट्रीय बाजारों में औषधीय पौधों की व्यावसायिक क्षमता को स्वीकार करना तथा उत्तराखण्ड के स्थानीय समुदायों की आजीविका की आवश्यकताओं को पूरा करना है।

सरकारी प्रयासों और सार्वजनिक सहयोग के माध्यम से इसे कार्यान्वित करने के लिए एक विस्तृत कार्ययोजना और वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता होगी। वृक्षारोपण के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ विशेषकर औषधीय पौधों को सुरक्षा प्रदान करना। वनों को नुकसान पहुँचाने वालों की पहचान करना तथा उनके खिलाफ कानूनी कार्यवाही करना। पर्वतीय क्षेत्र के वनों में मृदा एवं जल संरक्षण के लिए विशेष प्रयास करने, जैसी कई योजना जो उत्तराखण्ड के वनों के संरक्षण के साथ-साथ उनके संवर्द्धन के लिए अनेक कार्य-योजनाएँ निर्मित हैं।

“जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर प्रभाव”

डॉ० शिवेन्द्र सिंह चन्देल

असि०प्र० राठ महाविद्यालय पैठाणी

पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

सारांश

जीवन के प्रत्येक क्षण में जलवायु का कितना अधिक प्रभाव है, इससे प्रत्येक व्यक्ति भलिभाँति परिचित है वर्तमान समय में ही नहीं बल्कि प्राचीन समय में भी पृथ्वी पर उपस्थित प्रत्येक प्राणी जलवायु परिवर्तन के कारण प्रभावित रहें होंगे। आज बढ़ते औद्योगिकीकरण और मानवीय क्रियाकलापों द्वारा केवल भारत ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में पारिस्थितिकी अंतःसंतुलन की स्थिति अत्यन्त भयावह होती जा रही है, जिसके परिणाम स्वरूप तपन और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ चिन्ता का विषय बनी हुई है जिसका सीधा प्रभाव मनुष्य के स्वास्थ्य पर दिखाई दे रहा है। आज प्रदूषण के कारण शुद्ध वायु नहीं मिल पा रही है जिसके कारण श्वास लेने में कठिनाई हो रही है, पीने के लिए शुद्ध पानी की कमी होती जा रही है, बढ़ते तापमान और मौसम में बदलाव के कारण हीट वेव, एवं विभिन्न बीमारियों जैसी घटनाओं का स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ रहा है। इसके साथ-साथ नगरों की संख्या में वृद्धि जलवायु परिवर्तन का एक मुख्य कारण है। यदि समय रहते इस पर ध्यान नहीं दिया गया तो भविष्य में जीवन इतना भयावह होगा जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

“ वनाग्नि प्रबन्धन में पारम्परिक ज्ञान एवं आधुनिक चेतना ”

डॉ० प्रवेश कुमार मिश्रा (असि० प्रो०)

बी०एड० विभाग

सारांश

राठ महाविद्यालय, पैठाणी

मानव जीवन की अनेक आवश्यकताओं में से एक वन भी है, जो परिस्थितिकी के साथ-साथ हमारी संस्कृति एवं अर्थव्यवस्था से भी जुड़ा है।

जब यही वन, अग्नि की चपेट में आता है, तो जीव-जगत अनेकों संकटों से गुजरते हैं। अनेक मनुष्य, जानवर, पशु, पक्षी, सूक्ष्म जीव काल कवलित होते हैं जिसका दुष्प्रभाव दीर्घ अवधि तक बना रहता है। सैकड़ों हजारों वर्षों की प्राकृतिक सम्पदाएँ नष्ट हो जाती हैं, जीव-जन्तुओं के आश्रय समाप्त हो जाते हैं, इन आपदाओं से बचे हुये जन्तु आबादी क्षेत्र की तरफ बढ़ते हैं, और हिंसक घटनाएँ घटती हैं।

वनाग्नि की घटनाओं के अध्ययनों से ज्ञात होता है कि ये घटनाएँ प्रकृति जन्म के साथ-साथ अधिकतम रूपों में मानव जनित होती हैं। जो प्रारम्भ में अत्यन्त सूक्ष्म रूप में होती हैं। ये वनाग्नियाँ मानव सभ्यता के साथ-साथ चलती रही हैं। जिसे रोकने के लिए भी मानव सभ्यता संघर्ष करती रही है, और अपने अनुभवों से मानव जगत ने इन घटनाओं को सीमित किया है, हमें उस पारम्परिक ज्ञान का संरक्षण और संवर्द्धन करना है, क्योंकि वनाग्नि की घटनाएँ जंगलों में होती हैं जहाँ तक अग्नि शमन के यन्त्रों को पहुँचाना अग्नि को नियन्त्रित करना कठिन होगा ऐसे में अग्नि शमन के पारम्परिक ज्ञान ही उपयोगी होगा।

तकनीकी के विकास का प्रभाव भी अग्नि शमन की दिशा में महत्वपूर्ण है। जिसमें ड्रोन तकनीक, कृत्रिम वर्षा, रिमोट सेसिंग, एरियल वाटर वमिंग आदि अनेकों उपाय हैं, जिनके माध्यम से वनाग्नि को नियन्त्रित किया जा सकता है।



जलवायु परिवर्तन का जीवन पर प्रभाव

डॉ० मनोज कुमार सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर (बी.एड.)

राठ महाविद्यालय पैठाणी (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड

सारांश

जलवायु में बहुत तेज़ी से परिवर्तन हो रहा है। वातावरण में आने वाले और बाहर जाने वाले विकिरण के बीच असंतुलन के परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन होता है। वर्ष 2100 तक वैश्विक औसत तापमान 5.4 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। जलवायु परिवर्तन मुख्य रूप से मनुष्यों के कारण होता है, खासकर ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि के कारण। जलवायु परिवर्तन को पारिस्थितिकी तंत्र, जैव विविधता और स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरे के रूप में पहचाना जाता है। यह ग्रह पृथ्वी के भौतिक वातावरण में परिवर्तन से जुड़ा है। जलवायु परिवर्तन दुनिया भर में जीवन को प्रभावित करता है। यह पौधों और जानवरों को प्रभावित करता है, जिसका असर प्रजातियों के अस्तित्व पर पड़ता है। मनुष्यों में, जलवायु परिवर्तन के कई हानिकारक परिणाम होते हैं। जलवायु परिवर्तन से जल और खाद्य असुरक्षा, रुग्णता/मृत्यु दर में वृद्धि और जनसंख्या का पलायन होता है। कमज़ोर आबादी (जैसे, बच्चे, बुजुर्ग, स्वदेशी और गरीब) असमान रूप से प्रभावित होती है। जलवायु परिवर्तन के परिणामों के लिए व्यक्तिगत अनुकूलन और निवारक उपाय समाज के लिए प्रमुख चुनौतियाँ हैं। नीति निर्माताओं को उचित रणनीतियाँ लागू करनी चाहिए, खास तौर पर कमज़ोर आबादी के लिए।

कीवर्ड :— जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, पारिस्थितिकी तंत्र, जानवरों का अस्तित्व, मानव स्वास्थ्य, कमज़ोर आबादी, अनुकूलन, रोकथाम।



उत्तराखण्ड में वनाग्नि एक पर्यावरणीय आपदा

डॉ० प्रमोद कुमार नौडियाल

प्रवक्ता जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान

पौड़ी गढ़वाल।

सारांश

उत्तराखण्ड राज्य का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 53,483 वर्ग किलोमीटर है तथा कुल वनक्षेत्र 24,303.83 वर्ग किलोमीटर है जो कि कुल भौगोलिक क्षेत्र का 45.44 प्रतिशत है। यह वनक्षेत्र मात्र स्थानीय पर्यावरण ही नहीं बल्कि हमारे अन्न भण्डार उत्तर के विशाल मैदान को जलराशि प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अपनी जैव विविधता, घने वन क्षेत्रों और पर्यावरणीय संपदा के लिए प्रसिद्ध यह क्षेत्र आज वनाग्नि की बढ़ती घटनाओं के कारण गंभीर पर्यावरणीय संकट का सामना कर रहा है।

वनाग्नि मुख्यतः मानवजनित गतिविधियों जैसे पशुओं के चारे कि लिए चीड़ की पत्तियों पर आग लगाने, कृषि अवशेषों को जलाने में असावधानी, हिंसक पशुओं के भय से गांव के नजदीकी झाड़ियों को जलाने, अराजक तत्वों द्वारा वनक्षेत्रों में अकारण आग लगाने तथा लोगों द्वारा जलती हुयी सिगरेट, बीडी को फेंकने इत्यादि से लगने वाली आग के कारण होती है, जबकि प्राकृतिक कारणों में गर्म तापमान, सूखा और तेज हवाएं इसके लिए अनुकूल वातावरण तैयार करते हैं। 2024-25 के आंकड़ों के अनुसार 01 नवम्बर 2024 से 30 मई 2025 तक वनाग्नि की 224 घटनाएँ दर्ज की गईं, जिससे 268.84 हेक्टेयर वनक्षेत्र प्रभावित हुआ। इससे न केवल वनस्पतियों की विविधता प्रभावित हुयी बल्कि पक्षियों, स्तनधारियों, तितलियों और अन्य वन्य जीवों के जीवन पर भी गंभीर प्रभाव पड़ा है। वनाग्नि से संकटग्रस्त और स्थानिक प्रजातियों जैसे तीतर, हिमालयी कस्तूरी मृग और कई औषधीय पौधे भी विलुप्ति के कगार पर जा रहे हैं।

प्रस्तुत आलेख उत्तराखण्ड में वनाग्नि एक पर्यावरणीय आपदा में संदर्भित सम्भावित कारण एवं निदान के लिए सामाजिक, पर्यावरणीय एवं सरकारी, गैर सरकारी प्रयासों पर प्रकाश डाला गया है, साथ ही राज्य सरकार, वन विभाग, वैज्ञानिक संस्थान और स्थानीय समुदाय मिलकर वनाग्नि की रोकथाम और पुनर्स्थापना की दिशा में समन्वित प्रयासों के लिए सुझाव दिये गये हैं, जिससे उत्तराखण्ड की अमूल्य जैव विविधता को संरक्षित किया जा सके।



वनाग्नि की रोकथाम में तकनीकी उपायों की आवश्यकता

संदीप लिंगवाल

असि० प्रो० (बी०एड०)

सारांश

राठ महाविद्यालय पैठाणी, (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड।

वनाग्नि की बढ़ती घटनाओं को देखते हुए, उनकी रोकथाम में तकनीकी उपायों का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। पारंपरिक तरीके, जैसे जागरूकता अभियान या त्वरित प्रतिक्रिया दल, अब पर्याप्त नहीं हैं। आधुनिक तकनीकें, जैसे उपग्रह निगरानी प्रणाली, ड्रोन और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित विश्लेषण, आग के जोखिम वाले क्षेत्रों की पहचान करने, आग लगने से पहले चेतावनी देने और यहां तक कि आग की शुरुआत में ही उसे बुझाने में मदद कर सकती हैं। उपग्रह आधारित थर्मल इमेजिंग के माध्यम से धुआँ या अत्यधिक गर्मी का पता लगाया जा सकता है, जिससे अग्निशमन दल को समय पर सूचित किया जा सके। ड्रोन, दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों में हवाई सर्वेक्षण कर सकते हैं, वास्तविक समय में डेटा प्रदान कर सकते हैं और आग की लपटों को नियंत्रित करने के लिए पानी या अग्निरोधी पदार्थों का छिड़काव भी कर सकते हैं। एल्गोरिदम मौसम के पैटर्न, वनस्पति घनत्व और मानवीय गतिविधियों के आधार पर आग के जोखिम का अनुमान लगा सकते हैं, जिससे निवारक उपायों को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके। इन तकनीकी नवाचारों को अपनाने से न केवल आग से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है, बल्कि बहुमूल्य वन संसाधनों और वन्यजीवों को भी बचाया जा सकता है।



“वन संरक्षण में भारतीय नारी की भूमिका”

डॉ० बालविद्या प्रकाश

असि० प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)

रामदेव पी०जी० कॉलेज जंगीगंज, भदोही

सारांश

हम लॉग वैश्विक युग में रह रहे हैं। समाज इतनी तीव्र गति से परिवर्तित हो रहा है कि उसकी गति प्रवाह ने वैश्विक संस्कृति को सामने लाकर खड़ा कर दिया। जिसमें भौतिकवादी जीवन दर्शन ने मानव के विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम दोहन किया। परिणामस्वरूप आज भावी पीढ़ी पर पर्यावरण का गंभीर संकट मंडराने लगा है। एक तरफ जहाँ समूचा विश्व पर्यावरण संरक्षण का नारा दे रहा है और कह रहा है पेड़ लगाओ जीवन बचाओ वहीं दूसरी ओर आर्थिक विकास की रणनीतियाँ जैसे राजमार्ग, भवन निर्माण, खनन उपयोग आदि प्राकृतिक संसाधनों का इतनी तेजी से उपयोग कर रही है कि जैव विविधता का संकट सामने दृष्टिगोचर हो रहा है।

विगत दो सौ वर्षों से आधुनिक समाज यह मानने लगा है कि नव प्रौद्योगिकीय का बेलगाम उपयोग करके अधिकाधिक संसाधन जुटाने की समस्या का आसान समाधान निकाला जा सकता है। उदाहरण स्वरूप कृत्रिम खादों और कीटनाशक दवाओं का उपयोग कर खाद्य उत्पादन में वृद्धि, पालतू पशुओं और फसलों की बेहतर किस्मों का विकास करना, उद्योगों का विकास करना आदि इन सब से अधिक विकास का लक्षण प्राप्त कर लिया गया है और इसी के विकास के नाम पर पेड़ों की अंधाधुंध कटाई हुई। इन सबसे पर्यावरण की अपूर्ण क्षति हुई है।

यदि हम भारतीय चिंतन परम्परा का अध्ययन करें तो दिखाई पड़ता है कि हमारी संस्कृति प्रकृति को माँ का दर्जा देती है। वहीं इसकी ओर वनों को पवित्र मानकर उसकी पूजा अर्चना की जाती थी। वर्तमान समय में हम में से अधिकांश लोग प्रकृति से काफी दूर हैं और इस बात का ध्यान नहीं रहता, हमारे उपयोग की प्रत्येक वस्तु प्रकृति से ही मिलती है। वहीं भारतीय नारियों ने वृक्षों की पूजा अर्चना कर उसकी पवित्रता को आज भी जीवंत रखा है। इस तरह भौतिकवादी जीवन दर्शन को आत्मसात करती है। दूसरी तरफ प्रकृति की लंबी आयु के लिए वट वृक्ष की पूजा, पीपल के पेड़ की पूजा, देव व आदिशक्ति का रूप मान नीम के पेड़ की पूजा कर परम्परागत रूप में वृक्षों के भूतकाल और भविष्यकाल के बीच एक सशक्त सेतु के रूप में संरक्षण करती चलती आ रही है।



भारत में वनाग्नि की स्थिति और चुनौतियाँ

डॉ० आलोक कृष्ण द्विवेदी

असिस्टेंट प्रोफेसर (बी.एड.) फैकल्टी ऑफ एजुकेशन

बनारस इंस्टिट्यूट ऑफ टीचर्स एजुकेशन, बाबतपुर वाराणसी।

सारांश

वन अग्नि विकराल रूप धारण कर चुकी है और दुनिया भर में इसकी आवृत्ति में वृद्धि हुई है, भारत भी इसका अपवाद नहीं है। इसे देखते हुए, भारत में वन अग्नि की स्थिति के बारे में वर्तमान ज्ञान की समीक्षा की गई है। भारत में वन आवरण को चार समूहों में विभाजित किया गया है, अर्थात् उत्तरी हिमालय, उत्तर-पूर्वी, दक्षिणी और मध्य। इन समूहों में से, यह पाया गया है कि यद्यपि उत्तर-पूर्वी समूह भारत के सभी समूहों में से अधिकतम क्षेत्र (55%) को घेरता है, लेकिन यह जले हुए वन क्षेत्र का मात्र (16%) है। केंद्रीय समूह वन अग्नि के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील पाया गया है क्योंकि कुल जले हुए क्षेत्र का लगभग (56%) इस क्षेत्र में आता है, हालाँकि यह वन आवरण का केवल (28%) ही कवर करता है। उत्तर-पूर्व में आग एक छोटे क्षेत्र में केंद्रित होती है जो बार-बार जलने के अधीन होती है, जबकि मध्य और दक्षिणी भारत में वे अधिक विस्तृत होती हैं। भारत में वनों की आग का जैव विविधता, वन प्रजातियाँ, जलवायु परिवर्तन और मिट्टी की विशेषताओं पर प्रभाव प्रस्तुत किया गया है और वनों की आग का पता लगाने और उसे नियंत्रित करने के लिए भारत सरकार द्वारा अपनाई गई विभिन्न रणनीतियों को प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त, वनों की आग का आर्थिक प्रभाव 1101 करोड़ रुपये/वर्ष से अधिक होने का अनुमान है।

कीवर्ड : वन आग, क्लस्टर, MODIS, भारतीय वन सर्वेक्षण, वनस्पति, जीव ।



पर्यावरण परिवर्तन का प्रभाव

श्री मनसा राम

शोध छात्र शिक्षाशास्त्र विभाग,

नेहरू ग्राम भारती मानित वि०वि० (प्रयागराज)

सारांश

पर्यावरण जलवायु स्वच्छता, प्रदूषण तथा वृक्ष का सभी को मिलकर बनता है, और ये सभी चीजे यानि कि पर्यावरण हमारे दैनिक जीवन से सीधा संबंध रखता है और उसे प्रभावित करता है। मनुष्य और पर्यावरण एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। पर्यावरण, जैसे जलवायु या वृक्षों का कम होना मानव शरीर और स्वास्थ्य पर सीधा असर डालता है। मानव की अच्छी बुरी आदतें जैसे वृक्षों को सहेजना, प्रदूषण रोकना, स्वच्छता रखना भी पर्यावरण को प्रभावित करता है। मनुष्य की बुरी आदतें जैसे पानी दूषित करना, वृक्षों की अधिक मात्रा में कटाई करना आदि पर्यावरण को बुरी तरह से प्रभावित करता है, जिसका नतीजा बाद में मानव को प्राकृतिक आपदाओं का समना करके भुगतना पड़ता है। आज तापमान बढ़ना, जल स्तर का नीचे गिरना गर्मी में पानी की बूंद-बूंद के लिए तरसना सब पर्यावरण को खराब करने के कारण ही होता है। मानव अपनी सुविधा के लिए अपने स्वार्थ के लिए एवं अपने स्वयं के विकास के लिए पर्यावरण को प्रभावित करता है, जिसका नतीजा उसे भुगतना पड़ता है। आज के समय में तापमान में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है जो कि कई जगहों पर तापमान 47 डिग्री एवं 48 डिग्री तक पहुँच जाता है। अगर मानव अभी भी नहीं जागा तो आने वाली पीढ़ी गर्मी व जलवायु परिवर्तन के कारण बहुत बड़ा नुकसान झेलने को मजबूर हो जायेगी। पर्यावरण प्रदूषण रोकने के लिए 5 जून को प्रत्येक व्यक्ति को एक वृक्ष लगाकर जब तक वह बड़ा न हो जाय तब तक उसे अपने बेटे की तरह पालना पड़ेगा अक्सर हो यह रहा है कि लोग पर्यावरण दिवस के दिन सिर्फ वृक्षारोपण का दिखावा करते हैं। सिर्फ फोटो खिंचवाना और उसे अपने व्हाट्सप और फेसबुक पर डालने तक ही सीमित रहते हैं। उसके बाद मुड़कर भी नहीं देखना है कि हमारे द्वारा लगाया हुआ वृक्ष जिंदा है या मर चुका है। किसी को कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। और यह प्रक्रिया सालों से चली आ रही है। वास्तव में धरती पर जीवजन्तु बचाने हैं, अपना भविष्य बचाना है तो हमें वृक्षों को संरक्षण करना होगा।

पर्यावरण है हम सबकी जान, इसलिए रखो इसका ध्यान, पृथ्वी को स्वर्ग बनाना है धरती से प्लास्टिक हटाना है, तभी आयेगी हरियाली जब होगी पेड़ की रखवाली, पर्यावरण पृथ्वी पर जीवन का आधार है। यह हमारे चारों ओर का वह प्राकृतिक और मानव निर्मित ढाँचा है जो जीवन को संभव बनाता है। हवा, पानी, पेड़ पौधे, और जीव जन्तु मिलकर पर्यावरण का निर्माण करते हैं, इसके साथ ही मानव की गतिविधियाँ और निर्माण भी इस पर्यावरण का हिस्सा है।

भारत में पर्यावरणीय नीतियों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

शुभम सुयाल

एम०ए० राजनीति विज्ञान (पी०जी० कॉलेज कोटद्वार)

छात्राध्यापक बी०एड० (राठ महाविद्यालय पैठाणी)

सारांश

वर्तमान समय में पर्यावरण केवल पारिस्थितिकी तंत्र का मुद्दा ही नहीं रह गया है बल्कि यह बृहद स्तर पर विचार-विमर्श का भी एक मूल हिस्सा बन गया है। तेजी से हो रहे जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन जैसे अनेक मुद्दों ने भारत में पर्यावरणीय नीतियों पर अपना बहुआयामी प्रभाव डाला है और यह प्रभाव नीति-निर्माण और प्रशासनिक दृष्टिकोण को बहुत ही गहराई से प्रभावित करती है। भारत ने जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप अपनी पूर्व की पर्यावरणीय नीतियों में अनेक परिवर्तन किये हैं जिसमें ऊर्जा के क्षेत्र में कोयला आधारित नीति के स्थान पर नवीकरणीय ऊर्जा (जैसे सौर, पवन जल), कृषि के क्षेत्र में अधिक जल की बरबादी को रोकने हेतु माइक्रो-इरिगेशन, शहरी नियोजन के बेतरतीब विस्तार को रोकने हेतु स्मार्ट सिटी और हरित भवन तथा वनों के संरक्षण में सामुदायिक वानिकी, कार्बन सिंक बढ़ाने की योजना, इलेक्ट्रॉनिक वाहन नीति जैसे अहम् नीतियों को बढ़ावा दिया है जिससे कि जलवायु परिवर्तन के कारणों को कम किया जा सकें। वर्ष 2023 में भारत ने सौर उत्पादन के क्षेत्र में जापान को पीछे छोड़ते हुए विश्व के तीसरे सबसे बड़े सौर ऊर्जा उत्पादक के रूप में उपलब्धि हासिल की है जो यह दिखाता है कि भारत जलवायु परिवर्तन के प्रति सजग एवं जागरूक है।

संपोषणीय विकास और वनसंरक्षण

डॉ० श्याम मोहन सिंह,

असिस्टेंट प्रोफेसर-बी०एड०,

राठ महाविद्यालय, पैठाणी (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड।

E-mail: shyammohan.926@gmail.com

सारांश

संपोषणीय विकास : संपोषणीय विकास मानव-पर्यावरण सम्बन्धों पर आधारित एक महत्वपूर्ण और व्यापक अवधारणा है, जो मनुष्य की भावी पीढ़ियों की पर्यावरण पर आधारित आवश्यकताओं को पूरा करने की प्राकृतिक क्षमताओं से समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की ज़रूरतों को पूरा करने पर ध्यान केन्द्रित करती है। मानव ने अपने सामाजिक-आर्थिक विकास के क्रम में प्राकृतिक संसाधनों का अतार्किक दोहन और अविचारित शोषण करने में कोई संकोच नहीं किया। जिसका दुष्परिणाम विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं एवं पर्यावरणीय संकटों के रूप में परिलक्षित हो रहा है। अतः यह आवश्यक है कि मानव विकास के विविध पहलुओं को इस प्रकार एकीकृत एवं समायोजित किया जाय कि यह पर्यावरण वर्तमान मनुष्यों के साथ-साथ उनकी भावी पीढ़ी के लिए भी समान रूप से पोषणीय और न्याय संगत हो।

वनसंरक्षण : वन अत्यन्त महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन हैं, जो मनुष्य की विभिन्न सामाजिक-आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रमुख स्रोत रहे हैं। जनसंख्या विस्फोट के कारण वनों पर मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति का दबाव खतरनाक स्तर पर पहुँच गया है। इस कारण से वनों के सदुपयोग की स्थिति, वनों के दोहन, शोषण एवं उन्मूलन में परिणत हो गयी है। मनुष्यों के मतलब की पूर्ति के लिए वनों के दोहन से परे वनाग्नि जैसी आपदाएं भी वनों के लिए अत्यन्त विनाशकारी हैं। वनाग्नि न केवल वनों अपितु वन्य जीवों के साथ-साथ अन्य पशु-पक्षियों, मनुष्यों और पूरे पर्यावरण के लिए भी अस्तित्व का संकट उत्पन्न करती है। अतः यदि पृथ्वी पर जीवन को बचाना है तो वनसंरक्षण की दिशा में सार्थक और सामूहिक प्रयास करना होगा। वन संरक्षण एक सारगर्भित और बहुआयामी शब्द है जिसके अंतर्गत बाह्य खतरों से वनों की सुरक्षा करना, विद्यमान वनों को उनके मौलिक स्वरूप में संरक्षित करना और नवीन वनों का विकास करना आदि बातें शामिल होती हैं।

संपोषणीय विकास और वनसंरक्षण : पृथ्वी पर मानव के विकास की कहानी अपने जीवन को स्वस्थ, सुखी एवं समृद्ध बनाने की कहानी है। परन्तु, वनों के विनाश की कीमत पर पृथ्वी पर जीवन का सार्वकालिक और स्थायी विकास असम्भव है, सुखी एवं समृद्ध जीवन की कल्पना असम्भव है। अगर हमें अपने जीवन को स्वस्थ, सुखी एवं समृद्ध बनाना है तो हमें विकास का ऐसा सन्तुलित प्रतिमान अपनाना होगा जिसमें हमारा भी अस्तित्व हो और हमारे वनों का भी। 'वनों के साथ हमारा सह-अस्तित्व' ही पृथ्वी पर स्वस्थ, सुखी एवं समृद्ध जीवन की गारंटी है। अगर वन हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के अनन्य स्रोत हैं तो हमारा भी नैसर्गिक उत्तरदायित्व है कि हम निरन्तर वनों का पोषण, परिरक्षण एवं संरक्षण करते रहें। वनों से हम जितनी मात्रा में कुछ ग्रहण करें, उतनी मात्रा में हम उसका पोषण भी करें।



वन विनाश का सम्भावित समाधान

DILIP KUMAR

(Resharch Scolar)

सारांश

Shri Baldev PG College Baragaon, Varanasi

कठिन प्रश्न होते हुए भी इस का उत्तर आसान है। कारण यह है कि उस स्थिति की हमें जानकारी है जब प्रकृति की हमारे ऊपर बड़ी कृपा थी। शुद्ध वायु, स्वच्छ जल, उर्वरक और प्रदूषण रहित भूमि तथा लहलहाते हुए वृक्षों वाले वन सभी हमें उपलब्ध थे। समय के साथ-साथ कुछ आवश्यकताओं ने और कुछ सुख-सुविधाओं की होड़ ने जीवन रक्षक पेड़ों की बर्बादी की। पर्यावरण सन्तुलन के लिए आवश्यक वनों को नष्ट कर दिया गया। अतः अब एक बार फिर पूरे देश को, देश के एक-एक व्यक्ति को पुरानी स्थिति प्राप्त करने हेतु जूझना होगा। सरकार को चाहे अपनी तीसरी भारतीय वननीति 1988 में भी संशोधन करना पड़े। कुछ ऐसे कठोर प्रतिबन्ध लगाने होंगे, जिससे वनों की रक्षा हो सके और नये वृक्षों के लगाने की शुरुआत हो। इसके साथ ही जनसाधारण में इस प्रकार चेतना जगानी होगी जिससे उनकी वृक्षों की सुविधा के लिए रुचि बढ़े।



वन संरक्षण में महिलाओं की भागीदारी

उमेश चन्द्र बंसल

असि0 प्रो0 बी0एड0

राठ महाविद्यालय पैठाणी, (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड

Email : bansal.chandra.umesh35@gmail.com

सारांश

सम्पूर्ण विश्व में वन संरक्षण के प्रति गहरी संवेदनशीलता तथा चेतना भारतीय दर्शन का परम्परागत दृष्टिकोण रहा है। भारतीय संस्कृति और सभ्यता में प्रकृति और उसमें पाए जाने वाले सभी प्रकार के जीव जंतुओं व पेड़ पौधों को प्रकृति माता का अभिन्न अंग माना जाता है। वास्तव में प्रकृति अनेक विविधताओं, सौंदर्यानुभूति और जीवन का मूल आधार पेड़ पौधे अर्थात् वनों से सजी हुई है, जिस कारण प्रकृति माता सभी जीव-जंतुओं व पेड़ पौधों के साथ निष्पक्षता और समदृष्टि का व्यवहार करती है।

प्रस्तुत समीक्षात्मक शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य वन संरक्षण में महिलाओं की भागीदारी-विशेष रूप से उत्तराखण्ड के संदर्भ में महिलाओं की यथार्थ भागीदारी के कारणों और प्रेरक शक्तियों का पता लगाने का प्रयास किया गया है। शोध पत्र में वन संरक्षण हेतु महिलाओं की चेतना, जागरूकता के साथ-साथ विभिन्न सरकारी और अर्धसरकारी, स्वयं सहायता समूहों, महिला मंगल दलों और अन्य क्लस्टर समूहों के साथ संरक्षण के प्रति उनकी धारणाओं एवं विचारों का सूक्ष्मता के निरंतर योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन है। शोध पत्र में महिलाओं की परम्परागत ज्ञान प्रणाली, नवाचारी सोच और वन संरक्षण हेतु प्रचलित तकनीकियों के प्रयोग का वर्तमान समय में प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला गया है। अंत में वन संरक्षण में चुनौतियों और इसके विभिन्न आयामों जैसे-प्राकृतिक संतुलन, जीवन का मूल आधार, सामाजिक उत्थान, भौगोलिक स्वरूप, सांस्कृतिक महत्व तथा मनोवैज्ञानिक प्रभावों पर निष्कर्ष है।

सूचक शब्द — वनीकरण, वनोन्मूलन, जेंडर और वनसंरक्षण, जैवविविधता और पारिस्थितिकी, सतत एवं सम्पोषणीय विकास, जलवायु परिवर्तन, वन विनाश रोकथाम।

वनाग्नि आपदा: कारण एवं प्रभाव (जनपद चम्पावत के विशेष सन्दर्भ में)

श्रीमती सुनीता नेगी

प्रवक्ता-भूगोल,

श0ह0मा0 रा0इ0का0 चमतोला, अल्मोड़ा।

उपेन्द्र सिंह चौहान

शोध छात्र एवं असिस्टेंट प्रोफेसर

भूगोल विभाग,

सारांश

स्वामी विवेकानन्द राजकीय स्ना0 महा0 लोहाघाट, चम्पावत।

अनादिकाल से ही मानव एवं जीव-जन्तु प्राकृतिक आपदाओं से जूझते आये हैं। आदिम युग में मानव इन्हें दैवीय-प्रकोप समझकर कांपता था किन्तु आधुनिक युग का मानव इन प्राकृतिक आपदाओं का रहस्य काफी कुछ समझ चुका है। मानव द्वारा प्रकृति के अत्यधिक दोहन, प्रदूषण एवं जंगलों के विनाश तथा बढ़ते हुए पृथ्वी के तापमान से, प्रकृति से जुड़ी शांति अनायास ही विचलित होती है जिसके कारण भू-स्खलन, बाढ़, सूखा, तुफान, भूकंप, आग, ज्वालामुखी तथा संक्रामक रोग आदि जैसी त्रासदी नाना प्रकार से मानव जीवन को चुनौती देती है। वनों में लगने वाली आग एक प्रमुख विनाशात्मक प्राकृतिक आपदा है, जो कि अनेक प्राकृतिक कारणों तथा मानव भूल अथवा स्वार्थवश लग सकती है। इससे जैव-विविधता का विनाश, जन-धन की हानि तथा पर्यावरण विनाश होता है।

जनपद चम्पावत वनाग्नि आपदा की दृष्टि से संवेदनशील है। प्रत्येक वर्ष यह मानव जीवन, वन्य प्राणी तथा पेड़-पौधों के लिए अन्य प्राकृतिक व मानव जनित आपदाओं की भाँति घातक सिद्ध हुयी है। निरन्तर बढ़ती हुई आबादी का दबाव वनों पर अत्यधिक पड़ने से वनों में आग लगने की दुर्घटनाओं में अत्यधिक वृद्धि हुई है। वनों में लगी आग से उठे धुएँ से न केवल मनुष्यों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है अपितु इससे आस-पास के क्षेत्रों के पर्यावरण पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है।

प्राकृतिक आपदाओं को रोक पाना मानव के वश में नहीं है। लेकिन इनके प्रभाव को कम किया जा सकता है।

कुंजी शब्द :- प्राकृतिक आपदा, वनाग्नि, दैवीय-प्रकोप, संवेदनशील, वनविनाश, जैव विविधता क्षरण।

वनाग्नि – एक पर्यावरणीय आपदा

डॉ० जितेन्द्र कुमार नेगी

वरिष्ठ सहायक प्रोफेसर भूगोल विभाग

राठ महाविद्यालय, पैठाणी

E-mail : jitendraneg496@gmail.com

सारांश

वनाग्नि (जंगल की आग) एक गंभीर पर्यावरणीय आपदा है, जो न केवल वनस्पति और जीव-जंतुओं के जीवन को नष्ट करती है, बल्कि जलवायु, जैव विविधता और मानव जीवन पर भी व्यापक प्रभाव डालती है। प्राकृतिक कारणों जैसे अत्यधिक गर्मी, बिजली गिरना, सूखा आदि के अलावा मानवीय लापरवाही, अवैध वनों की कटाई, और खेती के लिए जमीन साफ करने की प्रक्रिया भी वनाग्नियों का प्रमुख कारण बनती हैं।

वनाग्नि से वनों का तेजी से विनाश होता है, जिससे कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा वातावरण में बढ़ जाती है और ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ावा मिलता है। साथ ही, यह स्थानीय मौसम प्रणाली को भी प्रभावित करती है। पशु-पक्षियों का प्राकृतिक आवास जलकर नष्ट हो जाता है, जिससे उनकी प्रजातियाँ संकट में पड़ जाती हैं। इसके अतिरिक्त, आग से उत्पन्न धुआँ और वायु प्रदूषण मानव स्वास्थ्य के लिए भी गंभीर खतरा बनता है। हाल के वर्षों में वनाग्नियों की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि देखी गई है, जो जलवायु परिवर्तन की दिशा में एक चेतावनी संकेत है। इस आपदा को रोकने के लिए सतर्कता, वन सुरक्षा नियमों का पालन, आधुनिक तकनीकी निगरानी प्रणाली का उपयोग तथा जनजागरूकता की आवश्यकता है।

इस प्रकार, वनाग्नि न केवल एक प्राकृतिक आपदा है, बल्कि यह मानवीय असावधानी और पर्यावरणीय उपेक्षा का परिणाम भी है, जिससे निपटना आज की महत्वपूर्ण वैश्विक प्राथमिकताओं में से एक बन चुका है।

कीवर्ड : वनाग्नि, जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदा।

जलवायु परिवर्तन और मानव स्वास्थ्य

श्रीमती बन्दना सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर बी.एड. विभाग

राठ महाविद्यालय, पैठाणी, पौड़ी गढ़वाल।

E-mail : singh81bndna@gmail.com

सारांश

जलवायु परिवर्तन आज एक गंभीर वैश्विक संकट है, जो पृथ्वी के वातावरण और मौसम में दीर्घकालिक बदलाव के रूप में देखा जा रहा है। इसका मुख्य कारण मानवीय गतिविधियाँ हैं जैसे ग्रीनहाउस गैसों का अत्यधिक उत्सर्जन, वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधनों का अधिक उपयोग और तेजी से हो रहा शहरीकरण। इन कारणों से पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है, जिससे बाढ़, सूखा, तूफान और गर्मी की लहरें जैसी मौसमी घटनाएँ आम हो गई हैं। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव केवल पर्यावरण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानव स्वास्थ्य को भी गंभीर रूप से प्रभावित कर रहा है। बढ़ते तापमान के कारण हीट स्ट्रोक, डिहाइड्रेशन, और हृदय संबंधी रोग बढ़ रहे हैं। साथ ही, मलेरिया, डेंगू और अन्य संक्रामक बीमारियाँ तेजी से फैल रही हैं। वायु प्रदूषण के कारण अस्थमा और अन्य श्वसन रोगों की समस्याएँ भी बढ़ रही हैं। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक आपदाओं से लोगों में मानसिक तनाव और अवसाद की शिकायतें भी बढ़ रही हैं। कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से भोजन की कमी और कुपोषण जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। इस संकट से निपटने के लिए कुछ जरूरी कदम उठाए जा सकते हैं जैसे वृक्षारोपण को बढ़ावा देना, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करना, प्लास्टिक का उपयोग कम करना, सार्वजनिक परिवहन को अपनाना और पर्यावरणीय शिक्षा व जागरूकता को बढ़ाना। यदि आज हम सचेत नहीं हुए, तो आने वाली पीढ़ियों को इसके गंभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। अतः प्रत्येक नागरिक की जिम्मेदारी है कि वह पर्यावरण संरक्षण में सक्रिय योगदान दे और एक सुरक्षित तथा स्वस्थ भविष्य की ओर कदम बढ़ाए।

पर्यावरण प्रदूषण और प्रकृति

डॉ० बीरेन्द्र चन्द

असिस्टेंट प्रोफेसर

रक्षा एवं रणनीतिक अध्ययन, राठ महाविद्यालय पैठणी।

सारांश

वर्तमान में हम खतरनाक रूप से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से घिरे हुए हैं और यह समस्या भविष्य में हमारे लिये जानलेवा भी हो सकती है। वर्तमान में ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन जैसी विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं, पिछले एक दशक में वातावरणीय प्रदूषण का स्तर बहुत बढ़ा है।

सभी प्रकार के प्रदूषण बेशक पूरे पर्यावरण और परिस्थितिकी को प्रभावित कर रहे हैं। हम दशकों से पृथ्वी को प्रदूषित कर रहे हैं लेकिन हम अपनी दैनिक दिनचर्या के चलते इतने व्यस्त हो गए कि प्रकृति के प्रति हम अपनी जिम्मेदारियों को ही भूल गए।

प्राकृतिक संसाधन धीरे-धीरे प्रदूषित हो रहे हैं। इसी प्रदूषण को झेलते सुनहरे बुग्यालों का भविष्य संकट की ओर जाता दिखाई दे रहा है। एक मात्र उपाय सामाजिक जागरूकता है। प्रचार माध्यमों के द्वारा इस संबंध में लोगो तक संदेश पहुँचाने की आवश्यकता है। सामूहिक प्रयास से ही इस बढ़ती विश्वव्यापी समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है।

वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी

डॉ० लक्ष्मी नौटियाल

असि० प्रो०, हिन्दी विभाग

राठ महाविद्यालय पैठणी (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड

E-mail : nautiyallaxmi14@gmail.com

सारांश

आज पूरे विश्व पर पर्यावरण प्रदूषण का खतरा मंडरा रहा है। जिधर भी दृष्टि डाली जाए उधर प्रदूषण ही प्रदूषण नजर आता है। जल, जंगल एवं जलवायु सभी इस प्रदूषण के कारण दूषित एवं परिवर्तित हो चुके हैं। जिसके कारण आज पूरे विश्व पर घोर विनाश के बादल मंडरा रहे हैं। आज मानव अनेक प्रकार की घातक बीमारियों का शिकार होता जा रहा है और प्रदूषण का संकट इस कदर हावी हो चुका है कि बीमारी न बच्चों को देख रही है और न बुजुर्गों को। हृदय रोग, कैंसर जैसी घातक बीमारियाँ इस प्रदूषण का ही कारण बनती जा रही हैं।

एक समय ऐसा भी था, कि जब प्रकृति में स्वच्छ पर्यावरण था और हमारे साहित्यकारों द्वारा प्रकृति की गोद में बैठ कर ही साहित्य का सृजन किया गया। छायावादी काव्य तो पूरा प्रकृति की ही गोद में बैठ कर रचा गया, जिनमें कवि सुमित्रानन्दन पंत, जय शंकर प्रसाद आदि कवि प्रसिद्ध हैं, लेकिन आज वही प्रकृति प्रदूषण के कारण रुदन कर रही है।

अब प्रश्न उठता है कि वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की क्या भागीदारी है? तो महिलाएं हमेशा से ही पर्यावरण संरक्षण में अपनी भागीदारी निभाती हुयी, पुरुषों से आगे रही हैं और उन्होंने अनेक आन्दोलनों के माध्यम से वनों को बचाने का कार्य किया है इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण उत्तराखण्ड के लाता गांव में जन्मी गौरा देवी हैं जो कि रैणी गांव में कुछ महिलाओं को साथ लेकर लकड़हारों का सामना कर पेड़ों से चिपक गयी और आज उनके नाम से ही चिपको आन्दोलन पूरे विश्व में प्रसिद्ध हो गया है।

ग्रामीण महिलाओं का जीवन, वनों पर ही निर्भर है, क्योंकि वनों द्वारा उन्हें अपने जीवन के लिये आवश्यक संसाधन प्राप्त होते हैं। वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी उन्हें सक्षम और मजबूत बनाती है, अतः ऐसी महिलाओं को सरकार द्वारा, प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, और जब हमारी ग्रामीण महिलाएं सशक्त होंगी तो निश्चित ही वह दिन दूर नहीं, जब वह अपने वनों का संरक्षण करने में कामयाबी हासिल करेंगी।

की वर्ड — वन, वन संरक्षण, ग्रामीण महिलाएं।

प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था और आरण्य संस्कृति

डॉ० पंचम सिंह रावत

स्वतंत्र लेखन

विकास मार्ग पौड़ी, पौड़ी गढ़वाल।

सारांश

प्राचीन काल में ऋषि मुनियों ने अपनी आध्यात्मिक साधना एवं ज्ञान से खोज के लिए प्राकृतिक सुन्दरता सदाबहार नदियों के प्रवाह एवं कोलाहाल से दूर शांत वातावरण को देखते हुए घने जंगलों, पेड़-पौधों, लताओं के बीच में अपना आश्रम एवं निवास स्थान स्थापित कर अपनी संस्कृति के विस्तार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था तथा जंगलों को ही अपनी तपोभूमि एवं कर्मभूमि बनाया था। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में शिक्षा को प्राकृति से जोड़कर देखा जाता था प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था गुरुकुलों में स्थापित की गई थी जो प्राकृतिक वातावरण में स्थित थे। इन गुरुकुलों में छात्रों को जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक संसाधन प्राप्त करने के लिए स्वयं को आत्मनिर्भर बनाया जाता था। और उन्हें प्राकृति के प्रति सम्मान और प्रेम की शिक्षा दी जाती थी। गुरुकुल शिक्षा प्रदान के लिए एक प्रमुख स्थान था। तथा ये स्थान नदी के किनारे, जंगलों के पास तथा हरे-भरे क्षेत्र में स्थापित होते थे, जिसमें वनस्पतियों, पशुओं और प्राकृतिक घटनाओं, पर्यावरण का महत्व एवं प्राकृति का सम्मान और सुरक्षित रखने के लिए विद्यार्थियों को अध्ययन कराया जाता था।

इसी प्रकार महर्षि कण्व का आश्रम चौकी घाट के समीप सघन वनों एवं हरे-भरे घास तथा ऊँचे-ऊँचे पेड़ पौधों के बीच में स्थापित है। उनके (गुरुकुल) आश्रमों में कई विद्यार्थी जीवन यापन के लिए शिक्षा ग्रहण करते थे। आश्रम में कृषि, पशु, ज्योतिष की शिक्षा दी जाती थी। महर्षि कण्व एक बाल ब्रह्मचारी थे। वे अपने शिष्यों को अपना परिवार मानते थे। उन्होंने शकुन्तला का पालन पोषण अपने आश्रम किया था जो मेनका अप्सरा और महर्षि विश्वामित्र की पुत्री थी। उसका एक लड़का हुआ जिसका नाम भरत रखा गया। इसी के नाम पर देश का नाम भारतवर्ष रखा गया। महर्षि अगस्त्य मंत्रदृष्टा ऋषि थे। इनकी पत्नी का नाम लोपामुद्रा था तथा महर्षि अगस्त्य ने बद्रीकाश्रम में भी तपस्या की थी। इन्होंने समुद्र का शोषण किया था और विध्यांचल पर्वत को बढ़ने से रोकने को भी कहा था। अत्रि ऋषि इनकी पत्नी का नाम अनुसूया था। माता अनुसूया ने पुत्र प्राप्ति के लिए कठोर तपस्या की थी इस प्रकार यहाँ प्रतिवर्ष कई निसंतान स्त्रियाँ पुत्र प्राप्ति के लिए कामना करती हैं। महर्षि यमदग्नि आयुर्वेद के जनक और चिकित्साशास्त्र के भी ज्ञानी थे उत्तरकाशी के निकट नाकुरी नामक स्थान में इनकी पत्नी रेणुका ने शंकर भगवान की तपस्या की थी। बद्रीकाश्रम जहाँ प्राचीनकाल में नर और नारायण ऋषि तपस्या करते थे, बद्रीकाश्रम और केदानाथ आर्यों की दो पृथक-पृथक पूजा पद्धति के प्रचार केन्द्र थे। जिसमें देव दानव दोनों स्नातक की शिक्षा ग्रहण करते थे।

सतत् विकास और वन संरक्षण के लिये नीतियाँ

प्रदीप कुमार

असि0 प्रो0, बी0एड0 विभाग
राठ महाविद्यालय पैठाणी, (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड।
E-mail : kumarpri2005@gmail.com

सारांश

वैज्ञानिक विचारधारा के अनुसार पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति हेतु 4.3 बिलियन वर्ष पूर्व अनुकूल परिस्थितियाँ विकसित हुयी। इसी के बाद यहां पर जीवन का प्रारम्भ हुआ होगा। प्रारम्भिक दौर अर्थात् आदिमानव काल के समय में हरित ग्रह पर सभी कुछ संतुलित अवस्था में था अर्थात् हवा, पानी, प्राकृतिक वनस्पति एवं जलवायु जो कि जीवन के लिये एक समृद्ध परिस्थिति होती है। इसके अतिरिक्त ऋतुओं का क्रम वर्षा, सर्दी, गर्मी, जैवविविधता आदि सभी अनुकूल स्थिति में थे।

सभी जीवों में मानव बौद्धिक रूप से सर्वोपरि था, अतः उसने विकास हेतु अपने मस्तिष्क का उपयोग कर परिस्थितियों को अपने नियंत्रण में करना शुरू किया। इसका उद्देश्य मनुष्य को अधिक से अधिक सुख और भौतिक समृद्धि प्राप्त करना था। आधुनिकीकरण की इन उपलब्धियों को मानव ने विकास का नाम दिया। विकास की यह यात्रा इतनी तीव्र गति से बढ़ने लगी कि मनुष्य अति महत्वाकांक्षी और स्वार्थी हो गया। जिस कारण प्रकृति, जो कि समृद्ध और संतुलित अवस्था में थी वह प्रदूषित और असंतुलित होती चली गयी। वर्तमान में स्थिति इतनी भयावह है कि सम्पूर्ण विश्व को आभास हो चुका है कि यदि मानव के असंतुलित विकास की गति यही रही तो पृथ्वी पर जीवन अधिक समय तक नहीं रह सकेगा। अब स्थिति यह है कि मनुष्य विकास को रोक भी नहीं सकता और प्रकृति को भी सुरक्षित रखना है।

अतः दोनों में संतुलन स्थापित कर आगे की यात्रा को जारी रखा जाए इसके लिये “सतत् विकास” का प्रत्यय चुना गया है। इसके लिये वैश्विक और राष्ट्रीय स्तरों पर विभिन्न प्रकार के आयोजन किये जाते रहे हैं। सतत् विकास और वन संरक्षण हेतु कई प्रकार की नीतियाँ और कानून बनाये गये हैं।

कीवर्ड — जैव विविधता, सतत् विकास, वन संरक्षण।

वनाग्नि का जैव विविधता पर प्रभाव

पी0एल0 शाह

असि0 प्रो0 भूगोल विभाग,
रा0 स्ना0 महा0 वि0 गोपेश्वर (चमोली)

सारांश

पृथ्वी पर जैव विविधता का जो वर्तमान स्वरूप सृजित है, वह कई प्राकृतिक घटनाओं के फलस्वरूप निर्मित हुआ है। वर्तमान में पृथ्वी पर लगभग 20 लाख जैव प्रजातियाँ पायी जाती हैं। जिसमें सभी का अस्तित्व है कोई निरर्थक नहीं है। परन्तु वर्तमान में वनाग्नि जैसी मानवीकृत आपदा जैव विविधता के लिए बहुत हानिकारक है। वनाग्नि का जैव विविधता पर सबसे बुरा प्रभाव पड़ता है, वनाग्नि से जीवों के आवास जल जाते हैं जिससे जीवों की नई प्रजाती को रहने के लिए अनुकूल आवास नहीं मिलते हैं। कई पक्षियों के घोंसले अण्डे तथा बच्चों सहित जल जाते हैं, जिससे इन पक्षियों की नयी पीढ़ी नहीं हो पाती है। ऐसे पक्षी संकट का सामना करते हैं। वनाग्नि से छोटी-छोटी वनस्पति तथा पेड़-पौधे नष्ट हो जाते हैं। जिससे जैव विविधता प्रभावित होती है। वनाग्नि से कई औषधीय पादप प्रजातियाँ नष्ट हो जाती हैं, औषधीय पादपों के नष्ट हो जाने से मानव जीवन पर इसका प्रभाव पड़ता है, क्योंकि ये मानव जीवन के लिए महत्वपूर्ण होती हैं। वनाग्नि से वायुमण्डल में कार्बन मोनोऑक्साइड तथा कार्बन डाइ-ऑक्साइड पहुँचती है। इससे पर्यावरण प्रदूषण होता है। प्रदूषण से जैव विविधता को क्षति होती है। कई पशु-पक्षी प्रदूषण से बचने के लिए स्थान परिवर्तन करते हैं। कई बहुमूल्य इमारती लकड़ी जलकर राख हो जाती है। वनाग्नि से बचाव के लिए स्थानीय लोगों को जागरूक करना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि वनाग्नि से जीवों की कई प्रजातियाँ पृथ्वी पर संकट ग्रस्त हैं।

जलवायु परिवर्तन का स्वास्थ्य पर प्रभाव

डॉ० गिरजा सिंह

अतिथि प्रवक्ता, शारीरिक शिक्षा विभाग
बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी, 205001

डॉ० गोपेश कुमार सिंह

विभागाध्यक्ष, शारीरिक शिक्षा विभाग,
राठ महाविद्यालय पैठाणी (पौड़ी गढ़वाल)

सारांश

जलवायु, वातावरण की दीर्घकालिक औसत स्थिति को दर्शाने का कार्य करती हैं। 21वीं सदी में जलवायु परिवर्तन को वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्य के प्रति खतरा माना जा रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण गर्भ में पल रहे शिशु, बच्चे, और 65 वर्ष से अधिक उम्र के व्यक्तियों में हृदय सम्बन्धी समस्या, श्वसन सम्बन्धी समस्या, संक्रामक रोगों का प्रसार, कुपोषण, जलजनित बीमारी, मानसिक विकार, नींद का प्रभावित होना आदि समस्याएँ देखने को मिल रही हैं। वैडेनब्रुक के अनुसार जलवायु परिवर्तन के कारण भविष्य में और अधिक लोगों को अस्थमा, एलर्जी और क्रॉनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी जैसी बीमारियों से जूझना पड़ सकता है।

वर्तमान जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए मनुष्य को अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को धैर्य, नियम, संयम का आचरण करते हुए चलने, दौड़ने, कूदने की क्रिया को करना होगा। योगासन और व्यायाम को अपने दैनिक जीवन का अंग बनाते हुए प्रकृति के संतुलन हेतु किये जाने वाले उपाय के बारे में सोचना होगा।

एक शोध के अनुसार जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण स्वयं मनुष्य है। मनुष्यों द्वारा अपने कार्य और व्यवहार से प्रकृति के संतुलन को नुकसान पहुँचाने का कार्य निरंतर किया जा रहा है। वर्तमान परिस्थितियों के आधार पर कहा जा सकता है कि जलवायु परिवर्तन के रोकथाम हेतु पूरे विश्व को एकजुट प्रयास करना होगा, जिससे कि प्रकृति के संतुलन और मानव स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकें।

भारत में वनाग्नि की स्थिति और चुनौतियाँ

डॉ० अखिलेश कुमार सिंह

असि०प्र० बी०एड० विभाग,

सारांश

राठ महाविद्यालय पैठाणी (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड।

भारत, जैव विविधता से समृद्ध एक विशाल देश है जहाँ विभिन्न प्रकार के वन पाए जाते हैं। हाल के वर्षों में वनाग्नियों की घटनाओं में तीव्र वृद्धि हुई है, जिससे पर्यावरण, वन्य जीवन और मानव समुदायों पर गंभीर प्रभाव पड़ा है। राष्ट्रीय वन अग्नि मॉनिटरिंग प्रणाली के अनुसार, भारत में प्रति वर्ष हजारों वनाग्नि की घटनाएँ दर्ज की जाती हैं, जिनमें से अधिकांश गर्मी के मौसम में होती हैं। उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा और महाराष्ट्र जैसे राज्य सर्वाधिक प्रभावित होते हैं।

वनाग्नि के प्रमुख कारणों में मानवजनित गतिविधियाँ, जैसे कि झूम खेती, पशुओं के लिए घास जलाना, सूखा, उच्च तापमान और तेज़ हवाएँ शामिल हैं। जलवायु परिवर्तन ने भी इन घटनाओं की तीव्रता और आवृत्ति को बढ़ाया है। इन आगों के परिणामस्वरूप कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि, वन्यजीवों का पलायन, और मिट्टी की उर्वरता में कमी जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

सरकार द्वारा वनाग्नि की रोकथाम हेतु विभिन्न प्रयास किए गए हैं, जैसे सैटेलाइट निगरानी, सामुदायिक भागीदारी, और त्वरित प्रतिक्रिया बलों की स्थापना। फिर भी, जागरूकता की कमी, संसाधनों की सीमाएँ और स्थानीय समुदायों की सहभागिता की कमी, इन प्रयासों को पूर्ण रूप से सफल होने से रोकती हैं।

वनाग्नि की समस्या से प्रभावी ढंग से निपटने हेतु बहु-स्तरीय रणनीतियों, तकनीकी उन्नयन और जनभागीदारी को और अधिक सशक्त बनाए जाने की आवश्यकता है।

की-वर्ड : वनाग्नि, भारत, पर्यावरणीय प्रभाव, मानवजनित कारण।

पर्यावरण उन्नयन में रवीन्द्रनाथ टैगोर का योगदान

अयोध्या प्रसाद मिश्र

शोध-छात्र,

वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल वि० वि०, जौनपुर (उ०प्र०)

सारांश

प्रसिद्ध प्रकृतिवादी महान शिक्षाशास्त्री, कवि, नाटककार, राष्ट्र प्रेमी, समाज सेवी गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर जी का जन्म 7 मई 1861 ई० में कोलकाता के समीप जोड़ासाने नामक स्थान पर एक सुसंस्कृति, समृद्ध एवं प्रतिष्ठित और ख्यातिलब्ध परिवार में हुआ था। इन्होंने किसी प्रकार औपचारिक शिक्षा नहीं प्राप्त की थी। इन्होंने जो ज्ञान प्राप्त किमा वह सब प्रकृति, परिवार और स्वाध्याय से प्राप्त ग्यारह वर्ष की सुकुमार अवस्था में उन्हें अपने पिता के साथ अनुपम एवं अलौकिक हिमालय की प्राकृतिकवादियों में यात्रा करने सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस यात्रा के द्वारा गुरुदेव जी प्रकृति के इतने नजदीक या करीब हो गये कि उनके मन मस्तिष्क पर प्रकृति का अमित छाप पड़ी। जिसका प्रभाव आने वाले भविष्य में गुरुदेव जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर परिलक्षित होता है। आज उनकी गणना विश्व के महानतम प्रकृतिवादी शिक्षा-शास्त्रियों में की जाती है।

पर्यावरणीय उन्नयन में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के योगदान को निम्न रूप से वर्णित किया जा सकता है। प्रकृति के प्रति प्रेम उनकी कविताओं एवं गीतों में दर्शित होता है। इन्हीं के माध्यम से वे प्रकृति के सौन्दर्य और सामाजिक की प्रशंसा करते थे और मानव जाति के साथ इसके सम्बन्ध की गहन समझ रखते थे। टैगोर जी महान प्रकृतिवादी शिक्षाशास्त्री थे। उन्होंने अपने इस विचार को व्यवहार रूप में वर्णित करने के लिए शान्तिनिकेतन में विश्वभारती नाम की संस्था को प्रकृति की सुखम वादियों में स्थापना की, जहाँ शिक्षा का महत्वपूर्ण भाग प्रकृति के साथ अनुभव करना था। वे मानते थे कि बच्चों को पेड़ों आसमान और मिट्टी से भी सीखना चाहिए, न कि केवल किताबों से। इस लिए टैगोर जी ने अपनी शिक्षा व्यवस्था में बालकों को क्रिया द्वारा सीखने पर बल दिया है। जिसमें प्रमुख रूप से पेड़ों पर पढ़ना और तालाबों में डुबकियां लगाना आदि। गुरुदेव ने अपने साहित्य में पर्यावरण के जागरूकता बढ़ाने के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी कविताओं और गीतों ने लोगों को प्रकृति एवं पर्यावरण की सुन्दरता और उसके महत्व के विषय में सोचने के लिए प्रेरित किया। वे प्रकृति के दोहन विनाश से चिंतित रहते थे। इसके लिए उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से लोगों में जागरूकता पैदा करना चाहते थे। वे मानवीय कार्यों के द्वारा पर्यावरण पर प्रभाव के विषय में जागरूकता बढ़ाना चाहते थे।

उत्तराखंड के पारिस्थितिकी तंत्र पर वन अग्नि का प्रभाव

शिशुपाल शोधार्थी

भूगोल विभाग

सारांश

प.ल.मो. शर्मा, कैंपस ऋषिकेश, उत्तराखण्ड

उत्तराखंड एक पर्वतीय राज्य है, जो अपनी समृद्ध जैव विविधता और घने वनों के लिए जाना जाता है। लेकिन हाल के वर्षों में वन अग्नि की घटनाओं में तेजी से वृद्धि हुई है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र पर गंभीर प्रभाव पड़ रहा है। गर्म और शुष्क मौसम, बढ़ते तापमान, जलवायु परिवर्तन और मानवीय लापरवाही के कारण इन आग की घटनाओं की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि हुई है। वन अग्नि से सबसे पहले वनस्पति और वन्य जीवों को नुकसान होता है। आग में पेड़, झाड़ियाँ और अन्य वनस्पतियाँ जल जाती हैं, जिससे वन क्षेत्र की पारिस्थितिक संरचना प्रभावित होती है।

वन्यजीवों के आवास नष्ट हो जाते हैं और कई बार वे आग की चपेट में आकर मारे जाते हैं या विस्थापित हो जाते हैं। इसके अलावा, वन अग्नि से वातावरण में भारी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य गैसों उत्सर्जित होती हैं, जो जलवायु परिवर्तन को और अधिक गंभीर बनाती हैं। आग के कारण मृदा की उर्वरता घटती है और जल चक्र प्रभावित होता है, जिससे जल स्रोतों पर असर पड़ता है।

धुएँ और गैसों के कारण वायु प्रदूषण बढ़ता है, जिससे स्थानीय लोगों में श्वसन संबंधी बीमारियाँ जैसे अस्थमा और ब्रोंकाइटिस की घटनाएँ बढ़ जाती हैं। आग से उन लोगों की आजीविका भी प्रभावित होती है, जो वनों पर निर्भर होते हैं। संरक्षित वन क्षेत्रों और जैव विविधता वाले पारिस्थितिकी को भी भारी नुकसान पहुँचता है।

इस समस्या से प्रभावी रूप से निपटने के लिए जन जागरूकता, रोकथाम, निगरानी, त्वरित प्रतिक्रिया और सामुदायिक भागीदारी को प्राथमिकता देना आवश्यक है।

वन अग्नि और जलवायु परिवर्तन का पारस्परिक संबंध

डा० सुनील कुमार सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर

बैकुंठ शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय अमरोली

सिवान (बिहार) - 841226

सारांश

वनअग्नि मूलतः दो शब्दों से मिलकर बना है वन तथा अग्नि। वन का तात्पर्य पृथ्वी पर पेड़ पौधों से अच्छा अच्छादित विशाल बृहत भाग तथा अग्नि का तात्पर्य आ आग या लौ से होता है इस प्रकार वनअग्नि का तात्पर्य वन क्षेत्र से जैसे जंगल झाड़ीदार भूमि घास के मैदान छोटे एवं विशाल वृक्षों से युक्त विभाग तथा अग्नि नियंत्रित और तेजी से फैलने वाली आगें यह आग प्राकृतिक या मानव जनित कारकों से लग सकती है तथा यह वन्य जीवों पर्यावरण और मानव जीवन के लिए एक बड़ा खतरा या अभिशाप होता है वह वन अग्नि प्राकृतिक घटनाओं आकाशीय बिजली ज्वालामुखी विस्फोट पेड़ों की डोलियों के परस्पर घर्षण मानव गतिविधियों जैसे जलती हुई फेंकी गई बीड़ी सिगरेट या बिना देखने किए गए अलाव से उत्पन्न होती है।

वरना अज्ञेय से वृक्ष जीवों पौधों और मिट्टी को नुकसान होता है और यह वायु प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन में भी योगदान कर सकता है जलवायु का तात्पर्य किसी विशेष स्थानीय क्षेत्र में लंबे समय तक औसत मौसम की स्थिति से होता है इसमें औसत तापमान धूप वर्षा और अन्य मौसम संबंधित तत्वों के दीर्घकालिक पैटर्न शामिल होते हैं।

वन अग्नि जलवायु परिवर्तन से घनिष्ठ रूप से संबंधित है वन अग्नि से निकलने वाले कार्बन डाइऑक्साइड कार्बन मोनोऑक्साइड अन्य ग्रीनहाउस गैसें जलवायु परिवर्तन को बढ़ाती हैं और और दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन से वन अग्नि की आवृत्ति और तीव्रता बढ़ती है वन अग्नि से कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन के कारण वैश्विक तापमान बढ़ता है जिससे जलवायु परिवर्तन और तीव्र होता है यह एक दूस चक्र है जहां वन अग्नि और जलवायु परिवर्तन एक दूसरे को प्रभावित करते हैं वन अग्नि के प्रबंधन और जलवायु परिवर्तन के संबंध के लिए समुदाय समाज एवं सरकारी संगठनों को तत्काल में कदम उठाने की आवश्यकता है

वनाग्नि के संदर्भ में उत्तराखण्ड : कारण प्रभाव एवं समाधान

डॉ दुर्गेश नन्दिनी

असि0 प्रो0, बी0एड0 विभाग

राठ महाविद्यालय पैठानी, (पौड़ी गढ़वाल) उत्तराखण्ड

E-mail : drdnbalodi@gmail.com

सारांश

पूरे ही विश्व में वनाग्नि सबसे बड़ी त्रासदी के रूप में उभरी है। जिसने अनगिनत जीव-जन्तु, पशु-पक्षी और पेड़-पौधों के अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। साथ ही अमूल्य प्राकृतिक सम्पदाओं को नष्ट होने की कगार पर खड़ा कर दिया है।

भारत के प्राकृतिक रूप से समृद्ध राज्यों में से एक राज्य उत्तराखण्ड है, जो अपने अनूठे प्राकृतिक सौंदर्य से सम्पूर्ण जगत को आकर्षित करता है। यहाँ के वन जैवविविधताओं से युक्त हैं। गम्भीर रोगों के लिये प्रभावपूर्ण औषधियाँ यहाँ के वनों की सम्पदा का हिस्सा हैं। भारत की कई महत्वपूर्ण नदियों की उद्गम स्थली उत्तराखण्ड के वनों में भिन्न-2 प्रकार की जीव जातियाँ स्वच्छन्दता से विचरण करती हैं। यहाँ मानव-प्रकृति के मध्य अनुठा सहअस्तित्व देखने को मिलता है।

लेकिन वनाग्नि ने मानव-प्रकृति के इस सहअस्तित्व को संघर्ष में परिवर्तित कर दिया। हर साल उत्तराखण्ड के सैकड़ों हेक्टेयर वन और वन्यजीव वनाग्नि में राख हो जाते हैं। हाल ही में माननीय उच्च न्यायालय, उत्तराखण्ड ने भी स्वतः संज्ञान लेते हुये प्रदेश में हर साल लगने वाली वनाग्नि पर चिंता व्यक्त की। इस से भी बड़ी चिंता यह है कि हर सार वनाग्नि से हो रही गम्भीर पर्यावरणीय क्षति के बावजूद, इससे निबटने के लिये कोई प्रभावी योजना या समाधान राज्य के पास नहीं।

प्रस्तुत शोध पत्र में उत्तराखण्ड में वनाग्नि, वनाग्नि के कारण, प्रभावों एवं समाधानों पर विचार किया गया है।

की वर्ड— वनाग्नि, उत्तराखण्ड, कारण, प्रभाव, समाधान।

“उत्तराखण्ड में वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी”

अरूण भट्ट

असिस्टेंट प्रोफेसर

राठ महाविद्यालय पैठानी

डॉ0 अभिलेख जगूड़ी

पूर्व अतिथि शिक्षक, भूगोल विभाग

बी0जी0आर0 परिसर पौड़ी (गढ़वाल)

सारांश

“उत्तराखण्ड में वन संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी” शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से महिलाओं की वन संरक्षण में भूमिका को उजागर करने का प्रयास किया गया है। इतिहास बताता है कि 1973 में चमोली की रेणी गाँव की गौरा देवी के नेतृत्व में ऐतिहासिक चिपको आन्दोलन से लेकर वर्तमान में महिला स्वयं सहायता समूहों और वन पंचायतों और विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं की वन संरक्षण में केन्द्रीय भूमिका रही है। प्रस्तुत अध्ययन बताता है कि सक्रिय वन पंचायतों और महिला समूहों वाले क्षेत्रों में वनों की कटाई में करीब 40 से 50 प्रतिशत की कमी आयी है। प्रस्तुत शोधपत्र चंपावत जिले के लोहाघाट ब्लाक की देवीधुरा वन पंचायत, उत्तरकाशी जिले की भटवाड़ी तहसील के डांग गाँव की वन पंचायत और ग्रामीण महिलाओं और पौड़ी गढ़वाल जिले के थलीसैण ब्लाक की समलौण संस्था की महिलाओं के द्वारा किये जा रहे वन संरक्षण और वन संवर्धन के कार्यों के अध्ययन और विश्लेषण पर आधारित है। चंपावत जिले की देवीधुरा वन पंचायत की ग्रामीण महिलाओं ने 200 हेक्टेयर से अधिक वन क्षेत्र को पुनर्जीवित किया है वहीं उत्तरकाशी के डांग गाँव की महिलाओं अपने जंगल को बचाने के लिए अपने बगल के पोखरी गाँव के 24 परिवारों के लिए श्रमदान से 600 मीटर की सड़क का निर्माण किया है। इन महिलाओं के समर्पण को देखते हुए जिला प्रशासन के द्वारा इस गाँव के जंगल को हरेला वन घोषित किया है। इसी तरह पौड़ी गढ़वाल के थलीसैण ब्लाक की महिलाओं के द्वारा समलौण संस्था के माध्यम से 1,50,000 से अधिक वृक्षों का रोपण किया है। ग्रामीण महिलाओं ने अपने सीमित संसाधनों, प्रशिक्षण की कमी और कम निर्णय लेने की शक्ति जैसी चुनौतियों का समना करते हुए भी अपने पारंपरिक ज्ञान की मदद से वन संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में जल, वायु एवं अग्नि संकट: भारतीय ज्ञान प्रणाली एवं स्थानीय शिक्षा परंपराओं की भूमिका

देवेन्द्र सिंह,
शोध पर्यवेक्षक-शिक्षा विभाग,
हेमवती नंदन बहुगुणा (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

अनिल कुमार,
शोधार्थी-शिक्षा विभाग,
हेमवती नंदन बहुगुणा (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

सारांश

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र, जहाँ प्राकृतिक सौंदर्य और जैव विविधता की भरपूर संपदा है, आज जल, वायु एवं अग्नि संकट जैसे गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं से जूझ रहे हैं। जल स्रोतों का सूखना, वायु की गुणवत्ता में गिरावट, तथा वनाग्नि की घटनाओं में वृद्धि इस क्षेत्र की पारिस्थितिकी को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रही है। इस शोध का उद्देश्य इन संकटों का विश्लेषण भारतीय ज्ञान प्रणाली और स्थानीय शिक्षा परंपराओं के परिप्रेक्ष्य से करना है। भारतीय ज्ञान परंपरा, विशेषतः पंच महाभूत सिद्धांत, आयुर्वेद, योग, वास्तु एवं लोक परंपराओं में पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए गहराई से अंतर्निहित दृष्टिकोण मौजूद हैं। यह अध्ययन उत्तराखण्ड के पारंपरिक जल-संचयन, सामूहिक वन संरक्षण, पर्यावरण-केन्द्रित त्योहारों एवं रीति-रिवाजों जैसे उपायों की पड़ताल करता है, जो जल, वायु एवं अग्नितत्वों के संरक्षण में सहायक रहे हैं। इसके साथ ही, स्थानीय पाठ्यक्रमों में इन पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों की वर्तमान उपस्थिति एवं प्रभाव को भी जांचा गया है। यह शोध क्षेत्रीय स्तर पर पर्यावरणीय संकट से निपटने के लिए एक वैकल्पिक, संस्कृति-संवेदनशील एवं शिक्षा-आधारित ढांचे की आवश्यकता को रेखांकित करता है। निष्कर्ष से यह स्पष्ट होता है कि उत्तराखण्ड की स्थानीय शिक्षा प्रणाली में भारतीय पारंपरिक ज्ञान को समेकित कर जलवायु संकट का एक मजबूत समाधान प्रस्तुत किया जा सकता है।

सूचक शब्द: भारतीय ज्ञान प्रणाली, स्थानीय शिक्षा, पर्वतीय क्षेत्रों में परंपराएँ, जलवायु संकट।

उत्तराखण्ड के पर्वतीय पारिस्थितिकीय तंत्र पर वनाग्नि के प्रभाव का अध्ययन

अरविन्द कुमार

असि0 प्रोफेसर शिक्षा विभाग, एस0आर0टी0 परिसर,
हेन0ब0ग0 विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
बादशाहीथौल, टिहरी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

सारांश

मानव सभ्यता के विकास ने मानव को विभिन्न प्रकार की सुविधायें प्रदान की हैं। इसके लिए मानव ने प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का उपयोग किया है। इन संसाधनों के उपयोग के लिए नवीन विधियों का सृजन किया है। पृथ्वी के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिकीय तंत्र विद्यमान हैं। इनमें से उत्तराखण्ड के अधिकांश भूभाग में पर्वतीय पारिस्थितिकीय तंत्र को देखा जा सकता है। यहां के आर्थिक क्रियाकलापों में भी वन सम्पदा का महत्वपूर्ण स्थान है। ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी कृषि एवं वन संसाधनों पर आधारित क्रियाकलाप करते हैं। इस प्रक्रिया में वनाग्नि की समस्या को उत्तराखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिवर्ष देखा जा सकता है। इस मानव जनित आपदा से उत्तराखण्ड में विभिन्न प्रकार की वन सम्पदा को अत्यधिक हानि हो रही है। जिससे सतत विकास की अवधारण के अनुसार किये जाने वाले क्रियाकलापों में कमी हो रही है। यह हमारे जीवन व पर्यावरण के लिए उचित नहीं है। प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्ता के द्वारा यह समझने का प्रयास किया जा रहा है कि उत्तराखण्ड में वनाग्नि के क्या-क्या कारण हैं। तथा इससे यहां के पारिस्थितिकीय तंत्र में किस प्रकार के प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं। वनों में पाई जाने वाली वनस्पति की संख्या एवं वन्य जीवजन्तुओं के जीवन में किस प्रकार के हानिकारक प्रभाव होते हैं। उत्तराखण्ड के पारिस्थितिकीय तंत्रों को इस समस्या से कैसे बचाया जा सकता है। सरकार व मानव समाज इस समस्या को कैसे दूर कर सकता है।

मुख्य भाव— वनाग्नि, पारिस्थितिकीय तंत्र, पर्वतीय पारिस्थितिकीय तंत्र प्राकृतिक संसाधन एवं वनस्पति, पारिस्थितिकीय तंत्र में वनाग्नि का प्रभाव, उत्तराखण्ड में वनाग्नि को रोकने के उपाय।

संधारणीय विकास के लिए शिक्षा

डॉ० बाल गोविन्द मौर्य

असिस्टेंट प्रोफेसर-शिक्षाशास्त्र

लाल बहादुर शास्त्री स्मारक पी०जी० कालेज

आनन्दनगर, महाराजगंज (उ०प्र०)

सारांश

सतत विकास और शिक्षा में बहुत गहरा सम्बन्ध है। शिक्षा के माध्यम से ही हम सतत विकास की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। सतत विकास वह विकास है जिसके अंतर्गत भावी पीढ़ियों के लिए आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमताओं से समझौता किये बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति किया जाता है। अतः पर्यावरण सुरक्षा के बिना विकास को सतत नहीं बनाया जा सकता अर्थात् भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए प्राकृतिक संसाधनों का वर्तमान समय में इस प्रकार प्रयोग करना, जिससे आर्थिक विकास एवं पर्यावरण सुरक्षा के बीच संतुलन बना रहे। सहस्राब्दि विकास लक्ष्य वर्ष 2000 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित आठ लक्ष्य निर्धारित किये थे, इन लक्ष्यों का उद्देश्य गरीबी, भुखमरी, शिक्षा, लैंगिक समानता, बाल मृत्यु दर कम करने, मातृ स्वास्थ्य, एचआईवी/एड्स और अन्य बीमारियों से लड़ाई, पर्यावरणीय स्थिरता और वैश्विक साझेदारी को बढ़ावा देना था। सहस्राब्दि विकास लक्ष्य वर्ष 2015 तक सभी विकासशील देशों में लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए लक्ष्य निर्धारित किया गया था, लेकिन गरीबी, भुखमरी एवं अशिक्षा जैसी विश्वव्यापी समस्या को खत्म करने के बहुत धन की आवश्यकता थी। इन समस्याओं को दूर करने के लिए विकसित देशों को आगे आना होगा। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा (वर्ष 2015-2030) में सभी सदस्य देशों विशेषतः विकसित, विकासशील एवं अल्पविकसित देशों पर सतत विकास लक्ष्य को समानरूप से लागू करेंगे। इस बार सतत विकास लक्ष्यों में 17 लक्ष्य शामिल किये गये। जिसमें मुख्यतः गरीबी उन्मूलन, भूख का उन्मूलन, स्वास्थ्य और कल्याण, गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा, लिंग समानता, स्वच्छ जल एवं स्वच्छता, ऊर्जा की उपलब्धता एवं स्थिरता, संसाधनों का संरक्षण, स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण इत्यादि बिन्दु निर्धारित थे। सतत विकास के लिए शिक्षा (एस.डी.जी.-4) एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसका उद्देश्य सभी को समान और समावेशी शिक्षा प्रदान करना है। सभी सदस्य देश सभी स्तरों पर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करेंगे साथ ही लिंग, जाति, धर्म और आर्थिक स्थिति के आधार पर भेदभाव को समाप्त करके समानता और समावेशी शिक्षा को मजबूत करेंगे। शिक्षा हमें यह समझने में मदद करती है कि कैसे हमें अपने दैनिक जीवन में सतत विकास के सिद्धांतों को लागू कर सकते हैं। शिक्षा के माध्यम से हम लोग पर्यावरण संरक्षण, ऊर्जा संचयन, जल संचयन और अपशिष्ट प्रबंधन जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर जागरूक हो सकते हैं। साथ ही शिक्षा हमें सतत विकास के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान प्रदान करती है, जैसे नवाचार, उद्यमिता और सामुदायिक भागीदारी इत्यादि शिक्षा द्वारा ही छात्रों में सतत विकास के लिए आवश्यक कौशलों में प्रशिक्षण देकर उन्हें एक जिम्मेदार नागरिक बना सकते हैं तथा पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में योगदान देने के लिए स्वयं एवं दूसरों को प्रेरित करने में सक्षम बनाता है। विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में सतत विकास के मुद्दों को शामिल करने के साथ ही शिक्षकों को प्रशिक्षण की व्यवस्था किया जाये, साथ ही समुदायों में अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से भी लोगों को जागरूक करने में मदद मिलती है।



वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं सतत विकास: जलवायु परिवर्तन के व्यापक प्रभावों के सन्दर्भ में

गीता खड्गड़ी

शोध निर्देशिका-शिक्षा विभाग,
हेमवती नंदन बहुगुणा (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

सूरज भान

शोधार्थी-शिक्षा विभाग,
हेमवती नंदन बहुगुणा (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड।

सारांश

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन एक अत्यंत जटिल और व्यापक वैश्विक संकट के रूप में सामने आया है। इसका असर केवल पर्यावरण तक सीमित नहीं है, बल्कि जैव विविधता, मानव स्वास्थ्य, वैश्विक तापमान, खाद्य उपलब्धता, जल संसाधनों और सामाजिक-आर्थिक संतुलन पर भी गहरा पड़ता है। हाल के वैज्ञानिक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है, समुद्री सतह ऊँची हो रही है, बर्फ पिघल रही है, और जैव विविधता में चिंता जनक गिरावट आ रही है जिन सभी के पीछे मुख्य कारण मानव जनसंख्या में वृद्धि है। इन परिवर्तनों का प्रभाव खेती-किसानी, जल आपूर्ति, स्वास्थ्य सेवाओं और जीवन यापन के साधनों पर भी पड़ रहा है। विशेष रूप से भारत जैसे विकासशील देशों में, जहां बड़ी आबादी कृषि पर निर्भर है। अनिश्चित मानसून, सूखा, और बाढ़ जैसी घटनाएं कृषि क्षेत्र को अस्थिर बना रही हैं। यह शोधपत्र जलवायु परिवर्तन प्रभाव को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझना और सतत विकास के लक्ष्य-13 से जलवायु परिवर्तन के प्रभावों की समीक्षा करता है। निष्कर्ष में यह पाया गया है कि वैज्ञानिक नवाचारों, ठोस नीतियों और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है, ताकि जलवायु संकट का समाधान करते हुए जीव-जगत के जीवन की गुणवत्ता और सतत विकास की प्रक्रिया को सुदृढ़ किया जा सके।

सूचक शब्द: वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सतत विकास और जलवायु परिवर्तन।



उत्तराखण्ड राज्य में वनाग्नि एक पर्यावरणीय आपदा

डॉ० नीमा भेतवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर भूगोल विभाग
शा0बे0चौ0रा0 महाविद्यालय पोखरी, क्वीली, टिहरी गढ़वाल

सारांश

हिमालय की गोद में बसे उत्तराखण्ड राज्य में वनाग्नि एक गम्भीर पर्यावरणीय आपदा है, जो हर साल वनों को नुकसान पहुंचाती है। वनाग्नि के कारण पर्यावरण प्रदूषण होता है, कई पेड़ पौधे नष्ट हो जाते हैं। कई प्रजातियों के जीव जल जाते हैं, जो अति गम्भीर समस्या है, जिसका प्रभाव पर्यावरणीय आपदा के रूप में सामने आता है। ग्रीष्म ऋतु के तीव्र होने के साथ ही वनाग्नि भी अपना विकराल रूप लेने लगती है। वनाग्नि के कारण ब्लैक कार्बन तथा कार्बन डाई आक्साइड सहित कई अन्य प्रदूषक भी उत्सर्जित होते हैं। जिसका नुकसान मनुष्य और जीव जंतुओं को उठाना पड़ता है। इसका दूरगामी प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है।

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2000 से जब राज्य उत्तर प्रदेश से अलग होकर बना, अब तक वनाग्नि से 54,800 हेक्टेयर से अधिक वन भूमि क्षतिग्रस्त हो चुकी है। हालांकि उत्तराखण्ड सहित समूचे हिमालयी राज्यों में वनाग्नि से पर्यावरण को कितना नुकसान होता है, इसके लिये कोई विशेष रिकार्ड अथवा आंकड़े उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। किन्तु उत्तराखण्ड सरकार द्वारा इस दिशा में ठोस कदम उठाए जा रहे हैं। उत्तराखण्ड प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा इस गंभीरता से विचार किया जा रहा है तथा कई सराहनीय प्रयास किए जा रहे हैं।



बौद्ध कालीन भारत में वन संरक्षण : एक अवलोकन

डॉ० राजीव दूबे,
असि० प्रोफेसर इतिहास विभाग,
राठ महाविद्यालय पैठाणी

सारांश

सामान्य तौर पर 600 B.C.E से 300 C.E (कुछ मान्यताओं के अनुसार 700 C.E) तक काल भारत में बौद्ध काल माना जाता है। इस काल में वनों का संरक्षण सामाजिक, धार्मिक और नैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता था। स्वयं महात्मा बुद्ध वनवासी जीवन को अत्यधिक महत्व प्रदान करते थे तथा भिक्षुओं को वनों में रहने, ध्यान करने तथा प्रकृति के प्रति करुणा और सम्मान की भावना प्रदर्शित करने के लिये सदैव प्रेरित करते रहते थे। कतिपय प्रमुख बौद्ध ग्रन्थों जैसे, विनय पिटक में तो बौद्ध भिक्षुओं को यह निर्देश दिया गया था कि वे वृक्षों को न तो काटें और न ही अपनी गतिविधियों से उन्हें किसी प्रकार का नुकसान पहुँचायें। निःसन्देह यह विवरण वृक्षों के प्रति महात्मा बुद्ध के संरक्षणवादी विचार और नीति का महान उदाहरण है।

प्रसिद्ध मौर्य सम्राट अशोक अपने शिलालेखों में पशु और वन के संरक्षण के लिये निर्देश प्रदान करता हुआ दिखाई पड़ता है। मेगस्थनीज के अनुसार कलिंग युद्ध के पश्चात निर्वासित लगभग डेढ़ लाख लोगों को सम्भवतः वनों को साफ करने और परती भूमि पर कृषि करने के कार्य में लगाया गया था। अशोक के दूसरे और सातवें स्तम्भ लेख में वन्य जीवों की रक्षा और औषधीय पौधों के रोपण का उल्लेख आया है। यह मौर्यकालीन भारत में वनों के प्रति राजकीय नीति का बोध कराता है। मौर्य काल में आटविक नामक पदाधिकारी वन विभाग का प्रमुख अधिकारी था। कुप्याध्यक्ष का भी उल्लेख मिलता है, जो वनों एवं उसकी सम्पदा का अध्यक्ष था। उल्लेखनीय है कि अधीत काल में वन अपने आप में केवल संसाधनों के स्रोत ही नहीं थे अपितु स्वास्थ्य, ध्यान और विद्या के केन्द्र के रूप में भी प्रासंगिक थे।

अतः यह स्पष्ट है कि बौद्ध काल में वन संरक्षण केवल पर्यावरणीय आवश्यकता ही नहीं अपितु धार्मिक और सांस्कृतिक कर्तव्य भी था। इस पृष्ठभूमि में यह कथनीय है कि प्राचीन में प्रकृति के प्रति गहरी संवदनशीलता और संरक्षण की भावना अस्तित्व में थी।

मुख्य शब्द — संरक्षण, करुणा, अधीत काल, कुप्याध्यक्ष, ध्यान ।

वनाग्नि का जैव विविधता पर प्रभाव

पी०एल० शाह
असि० प्रो० भूगोल विभाग,
रा० स्ना० महा० वि० गोपेश्वर (चमोली)

सारांश

पृथ्वी पर जैव विविधता का जो वर्तमान स्वरूप सृजित है, वह कई प्राकृतिक घटनाओं के फलस्वरूप निर्मित हुआ है। वर्तमान में पृथ्वी पर लगभग 20 लाख जैव प्रजातियाँ पायी जाती हैं। जिसमें सभी का अस्तित्व है कोई निरर्थक नहीं है। परन्तु वर्तमान में वनाग्नि जैसी मानवीकृत आपदा जैव विविधता के लिए बहुत हानिकारक है। वनाग्नि का जैव विविधता पर सबसे बुरा प्रभाव पड़ता है, वनाग्नि से जीवों के आवास जल जाते हैं जिससे जीवों की नई प्रजाती को रहने के लिए अनुकूल आवास नहीं मिलते हैं। कई पक्षियों के घोंसले अण्डे तथा बच्चों सहित जल जाते हैं, जिससे इन पक्षियों की नयी पीढ़ी नहीं हो पाती है। ऐसे पक्षी संकट का सामना करते हैं। वनाग्नि से छोटी-छोटी वनस्पति तथा पेड़-पौधे नष्ट हो जाते हैं। जिससे जैव विविधता प्रभावित होती है। वनाग्नि से कई औषधीय पादप प्रजातियाँ नष्ट हो जाती हैं, औषधीय पादपों के नष्ट हो जाने से मानव जीवन पर इसका प्रभाव पड़ता है, क्योंकि ये मानव जीवन के लिए महत्वपूर्ण होती हैं। वनाग्नि से वायुमण्डल में कार्बन मोनो ऑक्साइड तथा कार्बन डाइ-ऑक्साइड पहुँचती है। इससे पर्यावरण प्रदूषण होता है। प्रदूषण से जैव विविधता को क्षति होती है। कई पशु-पक्षी प्रदूषण से बचने के लिए स्थान परिवर्तन करते हैं। कई बहुमूल्य इमारती लकड़ी जलकर राख हो जाती है। वनाग्नि से बचाव के लिए स्थानीय लोगों को जागरूक करना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि वनाग्नि से जीवों की कई प्रजातियाँ पृथ्वी पर संकटग्रस्त हैं।

नवगीत साहित्य में प्राकृतिक विपदाएँ

जयमाला दूबे

शोध छात्रा,

डी0सी0एस0के0 मऊ, उत्तर प्रदेश

सारांश

नवगीत साहित्य, जिसे आधुनिक हिंदी कविता का संवेदी और यथार्थपरक रूप माना जाता है, केवल भावबोध की अभिव्यक्ति नहीं बल्कि सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय संकटों का दर्पण भी हैं। बदलते समय और समाज के साथ-साथ नवगीतों ने प्रकृति से सम्बन्धित संकटों, विशेषतः प्राकृतिक विपदाओं जैसे— बाढ़, सूखा, भूकंप, तूफान और वनाग्नि आदि को भी अपने कथ्य का हिस्सा बनाया है।

नवगीतकारों ने इन आपदाओं को केवल प्राकृतिक घटनाएँ न मानकर उन्हें मानवीय हस्तक्षेप और पर्यावरणीय असंतुलन का परिणाम माना है। नवगीतों में कृषक की पीड़ा, जलवायु परिवर्तन से जूझती धरती और मरते हुए जंगलों का चित्रण भावनात्मक एवं गहराई पूर्ण शैली में किया गया है। उदाहरण के तौर पर नरेश सक्सेना, गिरिजा कुमार माथुर, कृष्ण कुमार नाज, उमाशंकर तिवारी आदि नवगीतकारों ने अपने गीतों में जल संकट, सूखे खेतों और उजड़ते गांवों की पीड़ा को स्वर दिया है। इनके गीतों में बाढ़ से खिरे घर, आग से झुलसते पहाड़ और बारिश के लिए तरसती धरती का गहन चित्रण मिलता है।

नवगीत साहित्य में इन विपदाओं को केवल संकट नहीं, बल्कि एक सामाजिक चेतावनी, मानवीय संवेदनहीनता पर कटाक्ष और प्रकृति से विमुख होती संस्कृति के विरुद्ध आवाज के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह साहित्य प्रकृति के साथ संतुलन स्थापित करने का संदेश देता है और पाठकों में पर्यावरणीय जागरूकता उत्पन्न करता है।

हिन्दी उपन्यासों में जलवायु परिवर्तन

डॉ० प्रियम्बदा मिश्रा

सहायक अध्यापक, जय किसान इंटर कॉलेज,

सरायख्वाजा, जौनपुर (उत्तर-प्रदेश)

सारांश

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन केवल एक वैज्ञानिक या पर्यावरणीय मुद्दा नहीं है, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक विमर्श का भी प्रमुख विषय बन चुका है। हिंदी साहित्य, विशेष रूप से उपन्यास विधाओं में यह परिवर्तन सूक्ष्म रूप से प्रतिबिंबित होता है। इस शोध पत्र में हिंदी के समकालीन और आधुनिक उपन्यासों का विश्लेषण करते हुए यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि कैसे जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय असंतुलन उपन्यासकारों की दृष्टि में सामाजिक जीवन ग्रामीण संरचनाओं और मानव प्रकृति संबंधों को प्रभावित करते हैं।

नागार्जुन, फडिस्वर नाथ रेणु, मारकण्डे तथा सुमित्रा नन्दन पंत की रचनाओं में जलवायु परिवर्तन का प्रकृति पर पड़ने वाले प्रभावों को अत्यन्त मार्मिक ढंग से चित्रित किया गया है। प्रेमचंद के उपन्यासों में जहाँ सूखा, बाढ़ और कृषि संकट के माध्यम से जलवायु की अस्थिरता दिखाई देती है, वहीं निर्मल वर्मा जैसे लेखकों की रचनाओं में प्रकृति का क्षरण एक गहरे दार्शनिक संकट के रूप में सामने आता है। समकालीन लेखकों जैसे ममता कालिया, चित्रा मुग्दल, और आलोक धन्वा तथा संजीव के लेखन में शहरीकरण, जंगलों की कटाई और बढ़ते प्रदूषण के कारण उत्पन्न सामाजिक तनावों का विश्लेषण मिलता है।

इस शोध में यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि हिन्दी उपन्यासकारों ने न केवल पर्यावरणीय बदलाव को विषय बनाया है, बल्कि उन्होंने उस परिवर्तन से उत्पन्न सामाजिक असमानताओं, विस्थापन और मानसिक तनाव को भी साहित्यिक स्वरूप दिया गया है। इस प्रकार हिंदी उपन्यास केवल पर्यावरणीय चेतना का दर्पण नहीं, बल्कि एक सक्रिय विमर्श का माध्यम बन जाते हैं, जो प्रकृति और मानव के सम्बन्धों की पुनर्समीक्षा करते हैं।

पर्यावरणीय संचेतना और शिक्षा

डॉ० अमित कुमार

असि० प्रो०, शिक्षा विभाग,

ओ० स० राजकीय स्नातकोत्तर कॉलेज,

देवप्रयाग (टिहरी गढ़वाल) उत्तराखण्ड

E-mail : amitsagar042@gmail.com

सारांश

वर्तमान में देखा जाय तो कहीं सूखा, कहीं बाढ़, कहीं भीषण गरमी का हाहाकार, कहीं बादल फटने की घटनाएं और कहीं ग्लेशियर टूटने से होते नुकसान। ऐसे ना जाने कितने पर्यावरणीय प्रकोपों को झेलने वाली मानव प्रजाति अब भी नींद से नहीं जागी। क्योंकि उसने अपने तौर तरीकों में कोई बदलाव नहीं किया है, इसीलिये प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ने वाली घटनाओं जैसे— प्रदूषण, वनों का कटान, वनों में आगजनी, अंधाधुंध बांध बना कर पानी का जमाव, टूरिज्म के नाम पर शांत प्रकृति में अराजकता आदि में न्यूनता नहीं देखी गयी। और प्रकृति के संतुलन को बिगाड़ने वाली इन घटनाओं के न्यून ना होने से भीषण गर्मी, बाढ़, आकस्मिक बाढ़, बादल फटना, जलवायु परिवर्तन आदि घटनाओं में अधिकता हो गयी है।

अचेतन अवस्था में जा चुका मानव यदि अब भी चेतना में नहीं आया, तो भविष्य बहुत भयावह होगा। प्राकृतिक प्रकोपों से बचने के लिये आवश्यक है कि मानवों में पर्यावरणीय संचेतना आये। पर्यावरणीय संचेतना, मानवों की वह मानसिक स्थिति है, जिसमें वह अपने चारों ओर के पर्यावरण और पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न करने वाली घटनाओं के प्रति संवेदनशीलता रखता है। पर्यावरणीय संचेतना, मानवों में जागरूकता की वह स्थिति है जिसमें मानव प्रकृति में होने वाले विनाशकारी कृत्यों को, रोकने का भरपूर प्रयास करता है।

मानवों में पर्यावरण संचेतना उत्पन्न करने के लिये सबसे अहम् हथियार है, शिक्षा। क्योंकि शिक्षा ही वह उपकरण माना जा सकता है जो मानव की सोच और व्यवहार में आपेक्षिक परिवर्तन ला सकती है। प्रस्तुत शोध पत्र में उन तमाम शैक्षिक गतिविधियों का विवरणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जो मनुष्यों में पर्यावरणीय संचेतना को बड़ा कर उन्हें पर्यावरण के लिये जागरूक बना सकती हैं।

की वर्ड — पर्यावरण, पर्यावरणीय संचेतना, शिक्षा, शैक्षिक गतिविधियां।

वैश्विक ऊष्मन एवं उसका वैश्विक प्रभाव

डॉ० अखिलेश्वर कुमार द्विवेदी

असि० प्रो० भूगोल,

श्री अ० प्र० ब० राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

अगस्त्यमुनि, रुद्रप्रयाग।

Email – dr.akdeivedi@gmail.com

सारांश

वर्तमान परिवेश में ही नहीं पिछले कई दशकों से विश्व के विभिन्न पर्यावरणविद् एवं मौसम विज्ञानियों द्वारा मानवीय गतिविधियों के कारण पृथ्वी के तापमान में होती वृद्धि पर चिंता व्यक्त की जा रही है। तथा इस तापमान वृद्धि को नियंत्रित करने के उपाय भी सुझाये जा रहे हैं। किन्तु निरन्तर जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिकीकरण, विलासिता पूर्ण जीवन शैली ने वनस्पतियों, जीव जन्तुओं का विनाश तथा उपजाऊ भूमि को बंजर भूमि में परिवर्तन की प्रक्रिया को तीव्रता से बढ़ाया है। जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक चक्रों में बाधा उत्पन्न होती जा रही है व परिणाम स्वरूप वायुमण्डल, जलमण्डल व स्थलमण्डल प्रदूषित होते जा रहे हैं। जिसका प्रभाव वैश्विक ऊष्मन के रूप में परिलक्षित हो रहा है। जो कि वर्तमान व भविष्य के लिए हानिकारक है।



Raath Mahavidyalaya Paithani

Pauri Garhwal, Uttarakhand-246123

Ph. : 01348-227620, E-mail : rmvpaithani@gmail.com

Website : www.rmvpaithani.com